अध्याय ८

रामचन्द्र पुरी द्वारा महाप्रभु की आलोचना

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने अपने *अमृत प्रवाह भाष्य* में आठवें अध्याय का सारांश इस प्रकार दिया है : इस अध्याय में रामचन्द्र पुरी के साथ महाप्रभु के व्यवहार की कथा कही गई है। यद्यपि रामचन्द्र पुरी माधवेन्द्र पुरी का शिष्य था, किन्तु वह शुष्क मायावादियों द्वारा प्रभावित था, इसलिए वह माधवेन्द्र पुरी की आलोचना करता था। फलतः माधवेन्द्र पुरी ने उसे अपराधी कहकर तिरस्कृत कर दिया था। चूँकि रामचन्द्र पुरी अपने गुरु द्वारा तिरस्कृत हो चुका था, इसलिए वह केवल अन्यों में दोष निकालता रहता था और उन्हें शुष्क मायावाद दर्शन के अनुसार उपदेश देता था। इसी कारण से वह वैष्णवों का आदर नहीं करता था। बाद में वह इतना पतित हो गया कि श्री चैतन्य महाप्रभु के भोजन करने की भी आलोचना करने लगा। उसकी आलोचना सुनकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने भोजन करना कम कर दिया, किन्तु रामचन्द्र पुरी जब जगन्नाथपुरी से चला गया तो महाप्रभु पूर्ववत् आचरण करने लगे।

तं वन्दे कृष्ण-चैतन्यं रामचन्द्र-पुरी-भयात् ।
लौकिकाहारतः स्वं यो भिक्षान्नं समकोचयत् ॥ १ ॥

तम्—उनकी; **वन्दे**—मैं वन्दना करता हूँ; **कृष्ण-चैतन्यम्**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु की; **रामचन्द्र-पुरी-भयात्**—रामचन्द्र पुरी के भय से; **लौकिक**—साधारण; **आहारतः**—आहार से; **स्वम्**—अपना; **यः**—जिन्होंने; **भिक्षा-अन्नम्**—भोजन की मात्रा; **समकोचयत्**—कम कर दी।

अनुवाद

मैं उन श्री चैतन्य महाप्रभु को सादर नमस्कार करता हूँ, जिन्होंने रामचन्द्र पुरी की आलोचना से डरकर अपना भोजन करना कम कर दिया।

जय जय श्री-चैतन्य करुणा-सिन्धु-अवतार ।
ब्रह्मा-शिवादिक भजे चरण याँहार ॥२॥

जय जय श्री-चैतन्य करुणा-सिन्धु-अवतार ।
ब्रह्मा-शिवादिक भजे चरण याँहार ॥ २॥

जय जय—जय हो; **श्री-चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **करुणा-सिन्धु-अवतार**—जो करुणा के सागर के अवतार हैं; **ब्रह्मा-शिव-आदिक**—ब्रह्मा, शिव आदि देवगण; **भजे**—उपासना करते हैं; **चरण**—चरणकमल; **याँहार**—जिनके।

अनुवाद

करुणा के सागर श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो! उनके चरणकमलों की पूजा ब्रह्माजी तथा शिवजी जैसे देवता तक करते हैं।

जय जय अवधूत-चन्द्र नित्यानन्द ।
जगद्बाँधिल येँह दिया प्रेम-फाँद ॥३॥

जय जय अवधूत-चन्द्र नित्यानन्द ।
जगत् बाँधिल येंह दिया प्रेम-फाँद ॥ ३॥

जय जय—जय हो; **अवधूत-चन्द्र**—वैरागियों में चन्द्रमा समान; **नित्यानन्द**—भगवान् नित्यानन्द; **जगत्**—संसार; **बाँधिल**—बाँध दिया; **येंह**—जिन्होंने; **दिया**—द्वारा; **प्रेम-फाँद**—कृष्ण के प्रेमभाव की गांठ।

अनुवाद

महानतम अवधूत श्री नित्यानन्द प्रभु की जय हो, जिन्होंने भगवद् प्रेम की गाँठ से सारे जगत् को बाँध दिया।

जय जय अद्वैत ईश्वर अवतार ।
कृष्ण अवतारि' कैल जगत्त्रिस्तार ॥४॥

जय जय अद्वैत ईश्वर अवतार ।
कृष्ण अवतारि' कैल जगत् निस्तार ॥ ४॥

जय जय—जय हो; **अद्वैत**—अद्वैत आचार्य की; **ईश्वर**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के; **अवतार**—अवतार; **कृष्ण अवतारि'**—कृष्ण का अवतार करवाकर; **कैल**—किया; **जगत्-निस्तार**—समस्त संसार का उद्धार।

अनुवाद

पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के अवतार श्री अद्वैत प्रभु की जय हो! उन्होंने कृष्ण को अवतरित कराया और इस तरह सम्पूर्ण जगत् का उद्धार किया।

জয় জয় শ্রীবাসাদি যত ভক্ত-গণ ।
শ্রী-কৃষ্ণ-চৈতন্য প্রভু—যাঁর প্রাণ-ধন ॥ ৫॥
জয় জয় শ্রীবাসাদি য়ত ভক্ত-গণ ।
শ্রী-কৃষ্ণ-চৈতন্য প্রভু—য়াঁর প্রাণ-ধন ॥ ৫॥

जय जय—जय हो; **श्रीवास-आदि**—श्रीवास ठाकुर आदि; **य़त भक्त-गण**—सारे भक्तों की; **श्री-कृष्ण-चैतन्य प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **य़ाँर**—जिनके; **प्राण-धन**—प्राण और जीवन।

अनुवाद

श्रीवास ठाकुर इत्यादि समस्त भक्तों की जय हो! श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु उन सबके प्राण एवं जीवन हैं।

এই-মত গৌরচন্দ্র নিজ-ভক্ত-সঙ্গে ।
নীলাচলে ক্রীড়া করে কৃষ্ণ-প্রেম-তরঙ্গে ॥ ৬॥
এइ-মত গৌরচন্দ্র নিজ-ভক্ত-সঙ্গে ।
নীলাচলে ক্রীড়া করে কৃষ্ণ-প্রেম-তরঙ্গে ॥ ৬॥

एइ-मत—इस प्रकार; **गौरचन्द्र**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु; **निज-भक्त-सङ्गे**—अपने भक्तों के साथ; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी में; **क्रीड़ा करे**—विभिन्न लीलाएँ करते हैं; **कृष्ण-प्रेम-तरङ्गे**—कृष्ण-प्रेम की लहरों में।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने जगन्नाथपुरी में निजी भक्तों के साथ कृष्ण-प्रेम की तरंगों में विविध लीलाएँ सम्पन्न कीं।

হেন-কালে রামচন্দ্র-পুরী-গোসাঞি আইলা ।
পরমানন্দ-পুরীরে আর প্রভুরে মিলিলা ॥৭॥

हेन-काले रामचन्द्र-पुरी-गोसाञि आइला ।
परमानन्द-पुरीरे आर प्रभुरे मिलिला ॥७॥

हेन-काले—इस समय; **रामचन्द्र-पुरी-गोसाञि**—रामचन्द्र पुरी नामक एक संन्यासी; **आइला**—आया; **परमानन्द-पुरीरे**—परमानन्द पुरी; **आर**—और; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **मिलिला**—मिला।

अनुवाद

तभी रामचन्द्र पुरी गोसांइ नामक एक संन्यासी परमानन्द पुरी तथा श्री चैतन्य महाप्रभु से मिलने आया।

পরমানন্দ-পুরী কৈল চরণ বন্দন ।
পুরী-গোসাঞি কৈল তাঁরে দৃঢ় আলিঙ্গন ॥৮॥

परमानन्द-पुरी कैल चरण वन्दन ।
पुरी-गोसाञि कैल ताँरे दृढ़ आलिङ्गन ॥८॥

परमानन्द-पुरी—परमानन्द पुरी ने; **कैल**—किया; **चरण**—चरणों में; **वन्दन**—वन्दना; **पुरी-गोसाञि**—रामचन्द्र पुरी ने; **कैल**—किया; **ताँरे**—उन्हें; **दृढ़**—प्रगाढ़; **आलिङ्गन**—आलिंगन।

अनुवाद

परमानन्द पुरी ने रामचन्द्रपुरी के चरणों की वन्दना की और रामचन्द्र पुरी ने उनका गाढ़ आलिंगन किया।

तात्पर्य

चूँकि रामचन्द्र पुरी माधवेन्द्र पुरी का शिष्य था, इसलिए परमानन्द पुरी तथा श्री चैतन्य महाप्रभु दोनों ने ही उसको नमस्कार किया। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर की टीका है कि यद्यपि रामचन्द्र पुरी अत्यन्त ईर्ष्यालु था और

वैष्णव मत के विरुद्ध था—दूसरे शब्दों में पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् तथा उनके भक्तों के सिद्धान्तों के विरुद्ध था—तो भी सामान्य लोग उसे गोस्वामी या गोसांइ कहते थे, क्योंकि उसने बाह्य रूप से संन्यास ग्रहण कर रखा था और संन्यासी जैसा वेश बनाये रहता था। आधुनिक युग में गोस्वामी उपाधि गृहस्थों के एक वर्ग द्वारा प्रयुक्त की जाती है, किन्तु पहले ऐसा नहीं था। उदाहरणार्थ, रूप गोस्वामी तथा सनातन गोस्वामी इसलिए गोस्वामी कहलाते थे, क्योंकि उन्होंने संन्यास ले रखा था। इसी तरह चूँकि परमानन्द पुरी संन्यासी थे, अतः वे पुरी गोस्वामी कहलाते थे। इसलिए छानबीन करने पर देखा जा सकता है कि गोस्वामी किसी जाति विशेष की उपाधि नहीं है, प्रत्युत यह संन्यासी के लिए उपयुक्त उपाधि है।

महाप्रभु कैला ताँरे दण्डवत् नति ।
आलिङ्गन करि' तेंहो कैल कृष्ण-स्मृति ॥ ९ ॥

महाप्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कैला**—किया; **ताँरे**—उन्हें; **दण्डवत् नति**—दण्डवत् प्रणाम किया; **आलिङ्गन करि'**—गले लगाकर; **तेंहो**—रामचन्द्र पुरी ने; **कैल**—किया; **कृष्ण-स्मृति**—कृष्ण का स्मरण।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने भी रामचन्द्र पुरी को नमस्कार किया, जिसने महाप्रभु का आलिंगन किया और इस तरह कृष्ण का स्मरण किया।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामचन्द्र पुरी को अपने गुरु ईश्वर पुरी के भी गुरु श्रील माधवेन्द्र पुरी का शिष्य समझकर नमस्कार किया। जब कोई वैष्णव संन्यासी अन्य वैष्णव संन्यासी से मिलता है, तो वे दोनों श्रीकृष्ण का स्मरण करते हैं। मायावादी संन्यासी तक सामान्यतया नारायण का, जो कि कृष्ण हैं, *ॐ नमो भगवते नारायणाय* या *नमो नारायणाय* कहकर स्मरण करते हैं। इस तरह कृष्ण का स्मरण करना संन्यासी का कर्तव्य है। स्मृति शास्त्र के अनुसार

संन्यासी न तो नमस्कार करता है न आशीर्वाद देता है। कहा जाता है—*संन्यासी निराशीर्निर्नमस्क्रियः*—संन्यासी को न तो किसी को आशीर्वाद देना चाहिए, न नमस्कार करना चाहिए।

तिन-जने इष्ठ-गोष्ठी कैला कत-क्षण ।
जगदानन्द-पण्डित ताँरे कैला निमन्त्रण ॥ १० ॥

तिन-जने इष्ठ-गोष्ठी कैला कत-क्षण ।
जगदानन्द-पण्डित ताँरे कैला निमन्त्रण ॥ १० ॥

तिन-जने—तीनों लोगों ने; **इष्ठ-गोष्ठी**—कृष्ण विषयक चर्चा; **कैला**—की; **कत-क्षण**—कुछ समय तक; **जगदानन्द-पण्डित**—जगदानन्द पण्डित ने; **ताँरे**—रामचन्द्र पुरी को; **कैला निमन्त्रण**—निमंत्रित किया।

अनुवाद

इन तीनों ने कुछ समय तक कृष्ण के विषय में बातें कीं और तब जगदानन्द पण्डित ने आकर रामचन्द्र पुरी को निमन्त्रण दिया।

जगन्नाथेर प्रसाद आनिला भिक्षार लागिया ।
यथेष्ट भिक्षा करिला तेँहो निन्दार लागिया ॥ ११ ॥

जगन्नाथेर प्रसाद आनिला भिक्षार लागिया ।
यथेष्ट भिक्षा करिला तेंहो निन्दार लागिया ॥ ११ ॥

जगन्नाथेर प्रसाद—भगवान् जगन्नाथ का प्रसाद; **आनिला**—लाये; **भिक्षार लागिया**—खिलाने के लिए; **यथेष्ट भिक्षा करिला**—पेट भर खाया; **तेंहो**—उन्होंने; **निन्दार लागिया**—कुछ दोष निकालने के लिए।

अनुवाद

अधिक मात्रा में जगन्नाथ जी का प्रसाद वितरित करने के लिए लाया गया। रामचन्द्र पुरी ने डटकर भोजन किया, किन्तु उसके बाद वह जगदानन्द पण्डित के दोष ढूँढना चाहता था।

भिक्षा करि' कहे पुरी,—"शुन, जगदानन्द ।
अवशेष प्रसाद तुमि करह भक्षण" ॥ १२ ॥

भिक्षा करि' कहे पुरी,—"शुन, जगदानन्द ।
अवशेष प्रसाद तुमि करह भक्षण" ॥ १२ ॥

भिक्षा करि'—भोजन समाप्त कर; **कहे पुरी**—रामचन्द्र पुरी ने कहा; **शुन जगदानन्द**—मेरे प्रिय जगदानन्द, जरा सुनो; **अवशेष प्रसाद**—बचा हुआ प्रसाद; **तुमि**—तुम; **करह भक्षण**—खा लो।

अनुवाद

भोजन कर लेने के बाद रामचन्द्र पुरी ने अनुरोध किया, "प्रिय जगदानन्द, जरा सुनो तो। तुम इस बचे हुए भोजन को खा लो।"

আগ্রহ করিয়া তাঁরে বসি' খাওয়াইল ।
আপনে আগ্রহ করি' পরিবেশন কৈল ॥ ১৩ ॥

आग्रह करिया ताँरे वसि' खाओयाइल ।
आपने आग्रह करि' परिवेशन कैल ॥ १३ ॥

आग्रह करिया—अत्यधिक (निवेदन) उत्सुकतापूर्वक; **ताँरे वसि'**—उन्हें बिठाकर; **खाओयाइल**—खिलाया; **आपने**—स्वयं; **आग्रह करि'**—उत्साहपूर्वक; **परिवेशन कैल**—वितरण किया।

अनुवाद

रामचन्द्र पुरी ने अत्यन्त उत्सुकतापूर्वक जगदानन्द पण्डित को बैठाया और उन्हें स्वयं प्रसाद परोसा।

আগ্রহ করিয়া পুনঃ পুনঃ খাওয়াইল ।
আচমন কৈলে নিন্দা করিতে লাগিল ॥ ১৪ ॥

आग्रह करिया पुनः पुनः खाओयाइल ।
आचमन कैले निन्दा करिते लागिल ॥ १४ ॥

आग्रह करिया—उत्साहपूर्वक; **पुनः पुनः**—बारम्बार; **खाओयाइल**—खिलाया; **आचमन कैले**—जब उन्होंने अपने हाथ-मुँह धो लिए; **निन्दा करिते लागिल**—निन्दा करना प्रारम्भ किया।

अनुवाद

बारम्बार अनुरोध करके रामचन्द्र पुरी ने उन्हें खूब खिलाया, किन्तु

जब जगदानन्द हाथ-मुँह धो चुके, तो रामचन्द्र पुरी उनकी आलोचना करने लगा।

''শুনি, চৈতন্য-গণ করে বহুত ভক্ষণ ।
'সত্য' সেই বাক্য,—সাক্ষাদ্দেখিলুঁ এখন ॥ ১৫ ॥

"शुनि, चैतन्य-गण करे बहुत भक्षण ।
'सत्य' सेइ वाक्य,—साक्षात् देखिलुँ एखन ॥ १५ ॥

शुनि—मैंने सुना था; **चैतन्य-गण**—श्री चैतन्य महाप्रभु के अनुयायी; **करे बहुत भक्षण**—आवश्यकता से अधिक खाते हैं; **सत्य**—सच है; **सेइ वाक्य**—वह कथन; **साक्षात्**—सामने; **देखिलुँ**—मैंने देख लिया; **एखन**—अब।

अनुवाद

उसने कहा, "मैंने सुना है कि श्री चैतन्य महाप्रभु के अनुयायी आवश्यकता से अधिक खाते हैं। अब मैंने प्रत्यक्ष देख लिया है कि यह सच है।

সন্ন্যাসীরে এত খাওয়াঞা করে ধর্ম নাশ ।
বৈরাগী হঞা এত খায়, বৈরাগ্যের নাহি 'ভাস''' ॥ ১৬ ॥

सन्न्यासीरे एत खाओयाञा करे धर्म नाश ।
वैरागी हञा एत खाय, वैराग्येर नाहि 'भास'" ॥ १६ ॥

सन्न्यासीरे—एक संन्यासी को; **एत**—इतना अधिक; **खाओयाञा**—खिलाना; **करे धर्म नाश**—नियमों का नाश करता है; **वैरागी हञा**—संन्यासी होकर; **एत**—इतना अधिक; **खाय**—खाता है; **वैराग्येर नाहि भास**—वैराग्य का लेशमात्र भी नहीं है।

अनुवाद

"संन्यासी को अत्यधिक खिलाने से उसके नियम भंग हो जाते हैं, क्योंकि जब संन्यासी अत्यधिक भोजन करता है, तो उसका वैराग्य नष्ट हो जाता है।"

এই ত' স্বভাব তাঁর আগ্রহ করিয়া ।
পিছে নিন্দা করে, আগে বহুত খাওয়াঞা ॥ ১৭ ॥

एइ त' स्वभाव ताँर आग्रह करिया ।
पिछे निन्दा करे, आगे बहुत खाओयाजा ॥ १७॥

एइ—यह; **त'**—निश्चित रूप से; **स्वभाव**—लक्षण; **ताँर**—उसका; **आग्रह करिया**—उत्साहपूर्वक आग्रह करे; **पिछे**—बाद में; **निन्दा करे**—निन्दा करे; **आगे**—पहले; **बहुत**—अधिक; **खाओयाजा**—खिलाकर।

अनुवाद

रामचन्द्र पुरी का स्वभाव था कि वह पहले किसी को आवश्यकता से अधिक खिलाता था और बाद में उसकी आलोचना करता था।

पूर्वे यबे माधवेन्द्र करेन अन्तर्धान ।
रामचन्द्र-पूरी तबे आइला ताँर स्थान ॥ १८॥
पूर्वे यबे माधवेन्द्र करेन अन्तर्धान ।
रामचन्द्र-पुरी तबे आइला ताँर स्थान ॥ १८॥

पूर्वे—पूर्व में; **यबे**—जब; **माधवेन्द्र**—माधवेन्द्र पुरी; **करेन अन्तर्धान**—प्रयाण के निकट थे; **रामचन्द्र-पुरी**—रामचन्द्र पुरी; **तबे**—उस समय; **आइला**—आया; **ताँर स्थान**—उनके स्थान पर।

अनुवाद

इसके पहले जब माधवेन्द्र पुरी अन्तिम साँसें गिन रहे थे, तब रामचन्द्र पुरी उनके स्थान पर आया।

पूरी-गोसाञि करे कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन ।
'मथुरा ना पाइनु' बलि' करेन क्रन्दन ॥ १९॥
पुरी-गोसाञि करे कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन ।
'मथुरा ना पाइनु' बलि' करेन क्रन्दन ॥ १९॥

पुरी-गोसाञि—माधवेन्द्र पुरी; **करे**—कर रहे थे; **कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन**—भगवान् कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन; **मथुरा ना पाइनु**—मुझे मथुरा में शरण नहीं मिली; **बलि'**—कहकर; **करेन क्रन्दन**—रो रहे थे।

अनुवाद

माधवेन्द्र पुरी कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन कर रहे थे और कभी-कभी रो रहे थे, "हे प्रभु, मुझे मथुरा में शरण नहीं मिली।"

রামচন্দ্র-পুরী তবে উপদেশে তাঁরে ।
শিষ্য হঞা গুরুকে কহে, ভয় নাহি করে ॥২০॥

रामचन्द्र-पुरी तबे उपदेशे ताँरे ।
शिष्य हञा गुरुके कहे, भय नाहि करे ॥ २० ॥

रामचन्द्र-पुरी—रामचन्द्र पुरी ने; **तबे**—तब; **उपदेशे ताँरे**—उन्हें उपदेश दिया; **शिष्य हञा**—एक शिष्य होकर; **गुरुके कहे**—अपने गुरु से कहा; **भय नाहि करे**—बिना डर के।

अनुवाद

तब रामचन्द्र पुरी इतना मूर्ख था कि उसने निडर होकर अपने गुरु को उपदेश देने का दुस्साहस किया।

"তুমি—পূর্ণ-ব্রহ্মানন্দ, করহ স্মরণ ।
ব্রহ্মবিৎ হঞা কেনে করহ রোদন?" ॥২১॥

"तुमि—पूर्ण-ब्रह्मानन्द, करह स्मरण ।
ब्रह्मवित् हञा केने करह रोदन?" ॥ २१ ॥

तुमि—आपको; **पूर्ण-ब्रह्म-आनन्द**—पूर्ण दिव्य आनन्द में; **करह स्मरण**—स्मरण करना चाहिए; **ब्रह्म-वित् हञा**—ब्रह्म का पूरा ज्ञान होकर; **केने**—क्यों; **करह रोदन**—आप रो रहे हैं।

अनुवाद

उसने कहा, "यदि आप दिव्य आनन्द को प्राप्त हैं, तो आपको अब केवल ब्रह्म का स्मरण करना चाहिए। आप क्यों रो रहे हैं?"

तात्पर्य

जैसाकि *भगवद्गीता* में कहा गया है—*ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा*—ब्रह्म का साक्षात्कार कर चुका व्यक्ति सदैव प्रसन्न रहता है। *न शोचति न काङ्क्षति*—वह न तो शोक करता है, न ही किसी वस्तु की इच्छा करता है। रामचन्द्र पुरी ने बिना समझे-बूझे कि माधवेन्द्र पुरी क्यों रोदन कर रहे हैं, उनका उपदेशक

बनना चाहा। इस तरह उसने महान् अपराध किया, क्योंकि शिष्य को कभी भी अपने गुरु को उपदेश नहीं देना चाहिए।

শুনি' মাধবেন্দ্র-মনে ক্রোধ উপজিল ।
'দূর, দূর, পাপিষ্ঠ' বলি' ভৎর্সনা করিল ॥২২॥

शुनि' माधवेन्द्र-मने क्रोध उपजिल ।
'दूर, दूर, पापिष्ठ' बलि' भर्त्सना करिल ॥ २२॥

शुनि'—सुनकर; **माधवेन्द्र**—माधवेन्द्र पुरी के; **मने**—मन में; **क्रोध**—क्रोध; **उपजिल**—उत्पन्न हुआ; **दूर दूर**—चले जाओ; **पापिष्ठ**—पापी दुष्ट; **बलि'**—कहकर; **भर्त्सना करिल**—उन्होंने डाँटा।

अनुवाद

यह उपदेश सुनकर माधवेन्द्र पुरी अत्यधिक क्रुद्ध हुए और, "निकल जा, रे पापी!" कहकर उसको डाँटा।

तात्पर्य

रामचन्द्र पुरी यह नहीं समझ सका कि उसके गुरु माधवेन्द्र पुरी को दिव्य विरह भाव का अनुभव हो रहा था। उनका शोक भौतिक न था—प्रत्युत यह कृष्ण के प्रेमावेश की सर्वोच्च अवस्था से उत्पन्न था। जब वे विरह में रोदन कर रहे थे कि, "मैं कृष्ण को न पा सका! मैं मथुरा न पहुँच सका!" तो यह सामान्य भौतिक शोक न था। रामचन्द्र पुरी माधवेन्द्र पुरी के उद्‌गारों को समझने में पर्याप्त दक्ष न था; तो भी वह अपने आपको बहुत उन्नत मानता था। इसलिए माधवेन्द्र पुरी की अभिव्यक्ति को सामान्य भौतिक शोक मानते हुए उसने उन्हें ब्रह्म का स्मरण करने को कहा, क्योंकि वह प्रच्छन्न रूप से निर्विशेषवादी था। माधवेन्द्र पुरी रामचन्द्र पुरी की स्थिति को एक बड़े मूर्ख के रूप में समझ गये, इसीलिए तुरन्त उसे डाँटा। गुरु द्वारा ऐसी डाँट निश्चय ही शिष्य की भलाई के लिए होती है।

'কৃষ্ণ না পাইনু, না পাইনু 'মথুরা' ।
আপন-দুঃখে মরোঁ—এই দিতে আইল জ্বালা ॥২৩॥

'कृष्ण ना पाइनु, ना पाइनु 'मथुरा' ।
आपन-दुःखे मरों—एइ दिते आइल ज्वाला ॥ २३ ॥

कृष्ण—भगवान् कृष्ण; **ना पाइनु**—मुझे नहीं मिले; **ना पाइनु**—नहीं मिला; **मथुरा**—मथुरा; **आपन-दुःखे**—अपने दुःख में; **मरों**—मैं मर रहा हूँ; **एइ**—यह व्यक्ति; **दिते आइल ज्वाला**—मुझे और अधिक कष्ट देने आया है।

अनुवाद

"हे भगवान् कृष्ण! मैं न तो आपके पास और न ही आपके धाम मथुरा पहुँच पाया। मैं अपने दुःख में मर रहा हूँ और उस पर यह मूढ़ अब मुझे और पीड़ा देने आया है।

মোরে মুখ না দেখাবি তুই, যাও যথি-তথি ।
তোরে দেখি' মৈলে মোর হবে অসদগতি ॥২৪॥

मोरे मुख ना देखाबि तुइ, ग्राओ ग्रथि-तथि ।
तोरे देखि' मैले मोर हबे असद्‌गति ॥ २४ ॥

मोरे—मुझे; **मुख**—चेहरा; **ना देखाबि**—मत दिखाओ; **तुइ**—तुम; **ग्राओ**—जाओ; **ग्रथि-तथि**—कहीं ओर; **तोरे**—तुम्हें; **देखि'**—देखकर; **मैले**—यदि मैं मरूँगा; **मोर हबे असत्-गति**—मेरा सद्‌गति नहीं होगी।

अनुवाद

"तुम मुझे अपना मुँह मत दिखाओ! तुम अन्यत्र जहाँ कहीं जाना चाहो, चले जाओ। यदि मैं तुम्हारा मुँह देखते हुए मरूँगा, तो मुझे जीवन का गन्तव्य प्राप्त नहीं हो सकेगा।

কৃষ্ণ না পাইনু মুঞি মরোঁ আপনার দুঃখে ।
মোরে 'ব্রহ্ম' উপদেশে এই ছার মূর্খে" ॥২৫॥

कृष्ण ना पाइनु मुञि मरों आपनार दुःखे ।
मोरे 'ब्रह्म' उपदेशे एइ छार मूर्खे" ॥ २५ ॥

कृष्ण—कृष्ण को; **ना पाइनु**—प्राप्त नहीं कर सका; **मुञि**—मैं; **मरों**—मर रहा हूँ; **आपनार दुःखे**—अपने दुःख से; **मोरे**—मुझे; **ब्रह्म**—ब्रह्म का; **उपदेशे**—उपदेश देता है; **एइ**—यह; **छार**—निकृष्ट; **मूर्खे**—मूर्ख।

अनुवाद

"मैं कृष्ण की शरण पाये बिना मर रहा हूँ, इसलिए मैं अत्यधिक दुःखी हूँ। अब यह गर्हित मूर्ख मुझे ब्रह्म के विषय में उपदेश देने आया है।"

এই যে শ্রী-মাধবেন্দ্র শ্রীপাদ উপেক্ষা করিল ।
সেই অপরাধে ইঁহার 'বাসনা' জন্মিল ॥২৬॥

এइ য়ে শ্রী-মাধবেন্দ্র শ্রীপাদ উপেক্ষা করিল ।
সেइ অপরাধে ইঁহার 'বাসনা' জন্মিল ॥ ২৬ ॥

एइ—यह; **ये**—जो; **श्री-माधवेन्द्र श्रीपाद**—श्रीपाद माधवेन्द्र पुरी; **उपेक्षा करिल**—उपेक्षा की; **सेइ अपराधे**—इस अपराध के कारण; **इँहार**—रामचन्द्र पुरी की; **वासना**—भौतिक इच्छा; **जन्मिल**—उत्पन्न हुई।

अनुवाद

इस तरह रामचन्द्र पुरी को माधवेन्द्र पुरी ने तिरस्कृत कर दिया। अपने अपराध के कारण उसके भीतर धीरे-धीरे भौतिक इच्छा उदित हुई।

तात्पर्य

वासना ("भौतिक इच्छाएँ") शब्द शुष्क चिन्तनपरक ज्ञान का सूचक है। ऐसा तार्किक ज्ञान निरा भौतिक होता है। *श्रीमद्भागवत* (१०.१४.४) में पुष्टि हुई है कि जो व्यक्ति भक्ति के बिना वस्तुओं को केवल जानना चाहता है (*केवल-बोध-लब्धये*) उसे केवल शुष्क ज्ञान प्राप्त होता है, कोई आध्यात्मिक लाभ हाथ नहीं लगता। इसकी पुष्टि *भक्ति-सन्दर्भ* (१११) में भी हुई है :

जीवन्मुक्ता अपि पुनर्यान्ति संसारवासनाम्।
यद्यचिन्त्यमहाशक्तौ भगवत्यपराधिनः॥

"भले ही कोई इस जीवन में मुक्त क्यों न हो, यदि वह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के प्रति अपराध करता है, तो वह भौतिक इच्छाओं में गिर जाता है, जिनमें से आध्यात्मिक अनुभूति का शुष्क चिन्तन एक है।"

श्रीमद्भागवत की *लघुतोषणी* टीका (१०.२.३२) में जीव गोस्वामी ने कहा है :

जीवन्मुक्ता अपि पुनर्बन्धनं यान्ति कर्मभिः ।
यद्यचिन्त्यमहाशक्तौ भगवत्यपराधिनः ॥

"भले ही कोई इस जीवन में मुक्त हो, किन्तु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के प्रति अपराध करने से वह भौतिक इच्छाओं में लिप्त हो जाता है।"

इसी तरह का एक उद्धरण *विष्णु भक्ति चन्द्रोदय* में पुराणों से लिया गया है :

जीवन्मुक्ता प्रपद्यन्ते क्वचित् संसारवासनाम् ।
योगिनो ना विलिप्यन्ते कर्मभिः भगवत्पराः ॥

"कभी-कभी मुक्तात्मा भी भौतिक इच्छाओं में आ गिरते हैं, किन्तु जो लोग पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की भक्तिमयी सेवा में पूरी तरह लगे रहते हैं, वे ऐसी इच्छाओं के शिकार नहीं होते।"

ये प्रामाणिक शास्त्रों के प्रमाण हैं। यदि कोई अपने गुरु या पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का अपराधी होता है, तो वह भौतिक स्तर में पतित होकर केवल तर्कवितर्क करता रह जाता है।

শুষ্ক-ব্রহ্ম-জ্ঞানী, নাহি কৃষ্ণের 'সম্বন্ধ' ।
সর্ব লোক নিন্দা করে, নিন্দাতে নির্বন্ধ ॥ ২৭ ॥

शुष्क-ब्रह्म-ज्ञानी, नाहि कृष्णेर 'सम्बन्ध' ।
सर्व लोक निन्दा करे, निन्दाते निर्बन्ध ॥ २७ ॥

शुष्क—शुष्क; **ब्रह्म-ज्ञानी**—निराकारवादी दार्शनिक; **नाहि**—नहीं है; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के साथ; **सम्बन्ध**—सम्बन्ध; **सर्व**—सब; **लोक**—लोगों की; **निन्दा करे**—निन्दा करता है; **निन्दाते निर्बन्ध**—निन्दा में निरन्तर रत।

अनुवाद

जो व्यक्ति शुष्क तर्कवितर्क में लगा रहता है, उसका कृष्ण से कोई सम्बन्ध नहीं रहता। उसका कार्य वैष्णवों की आलोचना करना रह जाता है। इस तरह वह आलोचना करने में लगा रहता है।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने अपने *अनुभाष्य* में बतलाया है कि

निर्बन्ध शब्द सूचित करता है कि रामचन्द्र पुरी हमेशा दूसरों की निन्दा करना चाहता था। निराकार मायावादी लोग, जिनका सम्बन्ध कृष्ण से नहीं होता, जो भक्ति नहीं अपना सकते तथा जो ब्रह्म को समझने के लिए तर्क-वितर्क में लगे रहते हैं, ऐसे मायावादी लोग कृष्ण भक्ति को *कर्मकाण्ड* या सकाम कर्म मानते हैं। उनके अनुसार कृष्ण की भक्ति धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष प्राप्त करने का एक अन्य साधन है। इसलिए वे भक्तों की आलोचना भौतिक कर्मों में लगे रहने के लिए करते हैं। वे सोचते हैं कि भक्ति माया है और कृष्ण अथवा विष्णु भी माया हैं। इसीलिए वे मायावादी कहलाते हैं। ऐसी प्रवृत्ति उसी व्यक्ति में उदय होती है, जो कृष्ण तथा उनके भक्तों के प्रति अपराधी होता है।

ঈশ্বর-পুরী গোসাঞি করে শ্রীপাদ-সেবন ।
স্বহস্তে করেন মল-মূত্রাদি মার্জন ॥২৮॥

ईश्वर-पुरी गोसाञि करे श्रीपाद-सेवन ।
स्वहस्ते करेन मल-मूत्रादि मार्जन ॥ २८ ॥

ईश्वर-पुरी—ईश्वर पुरी; **गोसाञि**—गोस्वामी; **करे**—करते; **श्रीपाद-सेवन**—माधवेन्द्र पुरी की सेवा; **स्व-हस्ते**—अपने हाथ से; **करेन**—करते; **मल-मूत्र-आदि**—मल, मूल आदि; **मार्जन**—साफ।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के गुरु ईश्वर पुरी ने अपने हाथों से माधवेन्द्र पुरी का मलमूत्र साफ करके उनकी सेवा की।

নিরন্তর কৃষ্ণ-নাম করায় স্মরণ ।
কৃষ্ণ-নাম, কৃষ্ণ-লীলা শুনায় অনুক্ষণ ॥২৯॥

निरन्तर कृष्ण-नाम कराय स्मरण ।
कृष्ण-नाम, कृष्ण-लीला शुनाय अनुक्षण ॥ २९ ॥

निरन्तर—सदैव; **कृष्ण-नाम**—भगवान् कृष्ण का नाम; **कराय स्मरण**—स्मरण करवाते; **कृष्ण-नाम**—कृष्ण का पवित्र नाम; **कृष्ण-लीला**—कृष्ण की लीलाएँ; **शुनाय अनुक्षण**—हमेशा सुनाते।

अनुवाद

ईश्वर पुरी सदैव माधवेन्द्र पुरी को भगवान् कृष्ण का पवित्र नाम तथा उनकी लीलाएँ सुनाते थे। इस तरह उन्होंने माधवेन्द्र पुरी को तिरोधान के समय भगवान् कृष्ण के नाम तथा लीलाओं का स्मरण कराने में सहायता की।

তুষ্ট হঞা পুরী তাঁরে কৈলা আলিঙ্গন ।
বর দিলা—'কৃষ্ণে তোমার হউক প্রেম-ধন' ॥৩০॥

तुष्ट हञा पुरी ताँरे कैला आलिङ्गन ।
वर दिला—'कृष्णे तोमार हउक प्रेम-धन' ॥ ३० ॥

तुष्ट हञा—सन्तुष्ट होकर; **पुरी**—माधवेन्द्र पुरी ने; **ताँरे**—उन्हें; **कैला आलिङ्गन**—गले लगा लिया; **वर दिला**—वरदान दिया; **कृष्णे**—कृष्ण के प्रति; **तोमार**—तुम्हारा; **हउक**—हो जाये; **प्रेम-धन**—प्रेमधन।

अनुवाद

ईश्वर पुरी से प्रसन्न होकर माधवेन्द्र पुरी ने उनका आलिंगन किया और यह वर दिया कि वे कृष्ण के महान् भक्त तथा प्रेमी होंगे।

সেই হৈতে ঈশ্বর-পুরী—'প্রেমের সাগর' ।
রামচন্দ্র-পুরী হৈল সর্ব-নিন্দাকর ॥৩১॥

सेइ हैते ईश्वर-पुरी—'प्रेमेर सागर' ।
रामचन्द्र-पुरी हैल सर्व-निन्दाकर ॥ ३१ ॥

सेइ हैते—इस कारण से; **ईश्वर-पुरी**—ईश्वर पुरी; **प्रेमेर सागर**—प्रेमभाव के सागर; **रामचन्द्र-पुरी**—रामचन्द्र पुरी; **हैल**—हो गया; **सर्व-निन्दा-कर**—सबकी निन्दा करने वाला।

अनुवाद

इस तरह ईश्वर पुरी कृष्ण-प्रेम के सागर के तुल्य बन गये, जबकि रामचन्द्र पुरी शुष्क चिन्तक तथा हर एक का आलोचक बना।

মহদনুগ্রহ-নিগ্রহের 'সাক্ষী' দুই-জনে ।
এই দুই-দ্বারে শিখাইলা জগ-জনে ॥৩২॥

महदनुग्रह-निग्रहेर 'साक्षी' दुइ-जने ।
एइ दुइ-द्वारे शिखाइला जग-जने ॥ ३२ ॥

महत्—महात्मा की; **अनुग्रह**—कृपा की; **निग्रहेर**—डाँट का; **साक्षी**—प्रमाण; **दुइ-जने**—दोनों लोग; **एइ दुइ-द्वारे**—इन दोनों से; **शिखाइला**—सिखाया; **जग-जने**—संसार के लोगों को।

अनुवाद

ईश्वर पुरी को माधवेन्द्र पुरी का आशीर्वाद प्राप्त हुआ, जबकि रामचन्द्र पुरी को उनकी डाँट मिली। इसलिए ये दो व्यक्ति—ईश्वर पुरी तथा रामचन्द्र पुरी—महापुरुष के आशीर्वाद तथा दण्ड के पात्र होने के दृष्टान्त हैं। माधवेन्द्र पुरी ने ये दो दृष्टान्त प्रस्तुत करके सारे जगत् को शिक्षा दी।

জগদ্গুরু মাধবেন্দ্র করি' প্রেম দান ।
এই শ্লোক পড়ি' তেঁহো কৈল অন্তর্ধান ॥৩৩॥

जगद्गुरु माधवेन्द्र करि' प्रेम दान ।
एइ श्लोक पड़ि' तेंहो कैल अन्तर्धान ॥ ३३ ॥

जगत्-गुरु—समस्त विश्व के गुरु; **माधवेन्द्र**—माधवेन्द्र पुरी; **करि' प्रेम दान**—कृष्ण प्रेमभाव दान करके; **एइ श्लोक पड़ि'**—यह श्लोक पढ़कर; **तेंहो**—वे; **कैल अन्तर्धान**—इस भौतिक जगत् को त्याग दिया।

अनुवाद

इस तरह समस्त संसार के गुरु, श्रीपाद माधवेन्द्र पुरी ने कृष्ण-प्रेम का दान किया। इस भौतिक जगत् से विदा लेते समय उन्होंने निम्नलिखित श्लोक का उच्चारण किया।

অয়ি দীন-দয়ার্দ্র নাথ হে
মথুরা-নাথ কদাবলোক্যসে ।
হৃদয়ং ত্বদলোক-কাতরং
দয়িত ভাম্যতি কিং করোম্যহম্ ॥৩৪॥

अयि दीन-दयार्द्र नाथ हे
मथुरा-नाथ कदावलोक्यसे ।

हृदयं त्वदलोक-कातरं
दयित भ्राम्यति किं करोम्यहम् ॥ ३४॥

अयि—हे प्रभु; **दीन**—दीनों पर; **दया-आर्द्र**—दयालु; **नाथ**—हे स्वामी; **हे**—हे; **मथुरा-नाथ**—मथुरा नाथ; **कदा**—कब; **अवलोक्यसे**—मैं आपके दर्शन पाऊँगी; **हृदयम्**—मेरा हृदय; **त्वत्**—आपको; **अलोक**—देखे बिना; **कातरम्**—अत्यन्त व्यथित; **दयित**—हे सबसे प्रिय; **भ्राम्यति**—विचलित होता है; **किम्**—क्या; **करोमि**—करूँ; **अहम्**—मैं।

अनुवाद

"हे प्रभु! हे दीनदयाल स्वामी! हे मथुरापति! मैं कब आपको फिर से देखूँगी? आपको न देख पाने के कारण मेरा क्षुब्ध हृदय अस्थिर हो चुका है। हे मेरे परम प्रिय, मैं अब क्या करूँ?"

এই শ্লোকে কৃষ্ণ-প্রেম করে উপদেশ ।
কৃষ্ণের বিরহে ভক্তের ভাব-বিশেষ ॥৩৫॥

এই শ্লোকে কৃষ্ণ-প্রেম করে উপদেশ ।
কৃষ্ণের বিরহে ভক্তের ভাব-বিশেষ ॥ ৩৫॥

এই শ্লোকে—इस श्लोक में; **কৃষ্ণ-প্রেম**—कृष्ण-प्रेम; **করে উপদেশ**—सिखाते हैं; **কৃষ্ণের বিরহে**—कृष्ण से विरह अनुभव करके; **ভক্তের**—भक्त की; **ভাব-বিশেষ**—दिव्य भावना।

अनुवाद

इस श्लोक में माधवेन्द्र पुरी यह शिक्षा देते हैं कि किस तरह कृष्ण-प्रेम प्राप्त किया जाए। कृष्ण से विरह में व्यक्ति आध्यात्मिक पद को प्राप्त होता है।

পৃথিবীতে রোপণ করি' গেলা প্রেমাঙ্কুর ।
সেই প্রেমাঙ্কুরের বৃক্ষ—চৈতন্য-ঠাকুর ॥৩৬॥

পৃথিবীতে রোপণ করি' গেলা প্রেমাঙ্কুর ।
সেই প্রেমাঙ্কুরের বৃক্ষ—চৈতন্য-ঠাকুর ॥ ৩৬॥

পৃথিবীতে—इस भौतिक संसार में; **রোপণ করি'**—बोकर; **গেলা**—गये; **প্রেম-অঙ্কুর**—कृष्ण के प्रेमभाव का बीज; **সেই প্রেম-অঙ্কুরের**—कृष्ण के प्रति प्रेमभाव के उस बीज का; **বৃক্ষ**—वृक्ष; **চৈতন্য-ঠাকুর**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु।

अनुवाद

श्री माधवेन्द्र पुरी ने इस भौतिक जगत् में कृष्ण-प्रेम का बीज बोया और तब विदा ली। वही बीज बाद में श्री चैतन्य महाप्रभु के रूप में विशाल वृक्ष बन गया।

প্রস্তাবে কহিলুঁ পুরী-গোসাঞির নির্যাণ ।
যেই ইহা শুনে, সেই বড় ভাগ্যবান্ ॥৩৭॥

प्रस्तावे कहिलुँ पुरी-गोसाञिर निर्य्याण ।
येइ इहा शुने, सेइ बड़ भाग्यवान् ॥ ३७॥

प्रस्तावे—संयोग से; **कहिलुँ**—मैंने वर्णन किया है; **पुरी-गोसाञिर**—माधवेन्द्र पुरी का; **निर्य्याण**—तिरोधान; **येइ**—जो कोई भी; **इहा**—यह; **शुने**—सुनता है; **सेइ**—वह; **बड़ भाग्यवान्**—बहुत भाग्यशाली।

अनुवाद

संयोगवश मैंने माधवेन्द्र पुरी के तिरोधान का वर्णन किया है। जो भी इसे सुनता है, उसे अत्यन्त भाग्यशाली माना जाना चाहिए।

রামচন্দ্র-পুরী ঐছে রহিলা নীলাচলে ।
বিরক্ত স্বভাব, কভু রহে কোন স্থলে ॥৩৮॥

रामचन्द्र-पुरी ऐछे रहिला नीलाचले ।
विरक्त स्वभाव, कभु रहे कोन स्थले ॥ ३८॥

रामचन्द्र-पुरी—रामचन्द्र पुरी; **ऐछे**—इस प्रकार; **रहिला नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी में रहा; **विरक्त**—वैरागी का; **स्वभाव**—नियम; **कभु**—कभी; **रहे**—वह रहता है; **कोन स्थले**—विशेष स्थान पर।

अनुवाद

इस तरह रामचन्द्र पुरी जगन्नाथ पुरी में ठहरा रहा। जैसाकि संन्यासियों में प्रथा है, कभी वे किसी स्थान पर रहते और फिर वहाँ से चले जाते।

অনিমন্ত্রণ ভিক্ষা করে, নাহিক নির্ণয় ।
অন্যের ভিক্ষার স্থিতির লয়েন নিশ্চয় ॥৩৯॥

अनिमन्त्रण भिक्षा करे, नाहिक निर्णय ।
अन्येर भिक्षार स्थितिर लयेन निश्चय ॥ ३९ ॥

अनिमन्त्रण—बिना बुलाए; **भिक्षा करे**—भोजन करता; **नाहिक निर्णय**—कुछ निश्चित नहीं था; **अन्येर**—अन्यों के; **भिक्षार**—प्रसाद ग्रहण करने की; **स्थितिर**—स्थिति का; **लयेन निश्चय**—हिसाब करता।

अनुवाद

इसका कोई निश्चय नहीं रहता था कि रामचन्द्र पुरी कहाँ भोजन करेगा, क्योंकि वह अनिमन्त्रित होने पर भी ऐसा करता था। तो भी वह इस बात को सुनिश्चत करने में बहुत सतर्क रहता कि अन्य लोग कैसे भोजन करते हैं।

प्रभुर निमन्त्रणे लागे कौड़ि चारि पण ।
कभु काशीश्वर, गोविन्द खान तिन जन ॥ ४० ॥

प्रभुर निमन्त्रणे लागे कौड़ि चारि पण ।
कभु काशीश्वर, गोविन्द खान तिन जन ॥ ४० ॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **निमन्त्रणे**—निमन्त्रण में; **लागे**—लगते; **कौड़ि चारि पण**—३२० कौड़ी; **कभु काशीश्वर**—कभी काशीश्वर; **गोविन्द**—चैतन्य महाप्रभु का सेवक; **खान**—खाते; **तिन जन**—तीन लोग।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु को निमन्त्रित करने में ३२० कौड़ियाँ व्यय होतीं। इससे श्री चैतन्य महाप्रभु तथा कभी-कभी काशीश्वर और गोविन्द इन तीनों का भोजन हो जाता।

प्रत्यह प्रभुर भिक्षा इति-उति हय ।
केह यदि मूल्य आने, चारि-पण-निर्णय ॥ ४१ ॥

प्रत्यह प्रभुर भिक्षा इति-उति हय ।
केह यदि मूल्य आने, चारि-पण-निर्णय ॥ ४१ ॥

प्रति-अह—प्रतिदिन; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **भिक्षा**—भिक्षा; **इति-उति**—

इधर-उधर; **हय**—है; **केह**—कोई; **यदि**—यदि; **मूल्य आने**—चुकाता है; **चारि-पण**—चार पण (चार गुना-अस्सी छोटे शंख); **निर्णय**—नियत राशि।

अनुवाद

महाप्रभु नित्य अलग-अलग स्थानों में भोजन करते और यदि कोई भोजन का मूल्य चुकता करना चाहता, तो उसका मूल्य केवल चार पण निश्चित था।

प्रभुर स्थिति, रीति, भिक्षा, शयन, प्रयाण ।
रामचन्द्र-पुरी करे सर्वानुसन्धान ॥ ४२॥

प्रभुर स्थिति, रीति, भिक्षा, शयन, प्रयाण ।
रामचन्द्र-पुरी करे सर्वानुसन्धान ॥ ४२॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **स्थिति**—स्थिति; **रीति**—नियामक सिद्धान्त; **भिक्षा**—प्रसाद ग्रहण करना; **शयन**—सोना; **प्रयाण**—गतिविधियाँ; **रामचन्द्र-पुरी**—रामचन्द्र पुरी; **करे सर्व-अनुसन्धान**—सब खबर रखता।

अनुवाद

रामचन्द्र पुरी सभी तरह की सूचनाएँ एकत्र करने में लगा रहता कि श्री चैतन्य महाप्रभु कहाँ पर हैं, उनके नियम क्या हैं, वे कहाँ भोजन करते हैं, कहाँ सोते और कहाँ-कहाँ आते जाते हैं।

प्रभुर यतेक गुण स्पर्शिते नारिल ।
छिद्र चाहि' बुले, काँहा छिद्र ना पाइल ॥ ४३॥

प्रभुर यतेक गुण स्पर्शिते नारिल ।
छिद्र चाहि' बुले, काँहा छिद्र ना पाइल ॥ ४३॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **यतेक गुण**—सभी दिव्य गुण; **स्पर्शिते नारिल**—नहीं समझ सका; **छिद्र चाहि'**—दोष ढूँढने के लिए; **बुले**—घूमता; **काँहा**—कहीं भी; **छिद्र**—दोष; **ना पाइल**—वह नहीं ढूँढ सका।

अनुवाद

चूँकि रामचन्द्र पुरी केवल दोष निकालने में लगा रहता, इसलिए वह

श्री चैतन्य महाप्रभु के दिव्य गुणों को नहीं समझ सका। उसका एक-मात्र कार्य दोष निकालना था, किन्तु फिर भी उसे कोई दोष नहीं मिल पाया।

'सन्न्यासी हञा करे मिष्टान्न भक्षण ।
एइ भोगे हय कैछे इन्द्रिय-वारण'? ॥ ४४॥

सन्न्यासी हञा—संन्यासी होकर; **करे मिष्टान्न भक्षण**—मिठाईयाँ खाते हैं; **एइ भोगे**—इसे खाने से; **हय**—होगा; **कैछे**—कैसे; **इन्द्रिय-वारण**—इन्द्रिय संयम।

अनुवाद

अन्त में उसने एक दोष ढूंढ निकाला। उसने कहा, "भला एक संन्यासी इतनी तरह की मिठाइयाँ कैसे खा सकता है? यदि वह मिठाइयाँ खाता है, तो उसके लिए इन्द्रियों को वश में रखना अत्यन्त कठिन होगा।"

एइ निन्दा करि' कहे सर्व-लोक-स्थाने ।
प्रभुरे देखितेह अवश्य आइसे प्रति-दिने ॥ ४५॥

एइ निन्दा—यह निन्दा; **करि'**—करके; **कहे**—कहता है; **सर्व-लोक-स्थाने**—सबको; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **देखितेह**—दर्शन के लिए; **अवश्य**—अवश्य; **आइसे**—आता; **प्रति-दिने**—प्रतिदिन।

अनुवाद

इस तरह रामचन्द्र पुरी सबके समक्ष महाप्रभु की निन्दा करता, किन्तु तो भी वह नित्यप्रति नियमपूर्वक महाप्रभु के दर्शनार्थ आता।

प्रभु गुरु-बुद्ध्ये करेन सम्भ्रम, सम्मान ।
तेँहो छिद्र चाहि' बुले,—एई तार काम ॥ ४६॥

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु; **गुरु-बुद्ध्ये**—उसे अपने गुरु के गुरुभाई मानकर; **करेन सम्भ्रम सम्मान**—पूर्ण सम्मान तथा प्रणाम करते; **तेंहो**—रामचन्द्र पुरी; **छिद्र चाहि'**—दोष ढूँढने के लिए; **बुले**—घूमता है; **एइ**—यह; **तार**—उसका; **काम**—कार्य।

अनुवाद

जब वे दोनों मिलते, तो महाप्रभु उसे गुरु के गुरुभाई मानते हुए नमस्कार करते। किन्तु रामचन्द्र पुरी का कार्य महाप्रभु के दोषों को ढूँढना रहता।

यत निन्दा करे ताहा प्रभु सब जाने ।
तथापि आदर करे बड़ई सम्भ्रमे ॥ ४७॥

यत निन्दा करे ताहा प्रभु सब जाने ।
तथापि आदर करे बड़इ सम्भ्रमे ॥ ४७॥

यत—जो भी; **निन्दा**—निन्दा; **करे**—करता; **ताहा**—वह; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **सब**—समस्त; **जाने**—जानते थे; **तथापि**—फिर भी; **आदर करे**—सम्मान करके; **बड़इ सम्भ्रमे**—आदरपूर्वक।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु जानते थे कि रामचन्द्र पुरी सबके समक्ष उनकी आलोचना करता है, किन्तु जब भी वह महाप्रभु से भेंट करने आता, तो महाप्रभु उसका सभी प्रकार से सम्मान करते।

एक-दिन प्रातः-काले आइला प्रभुर घर ।
पिपीलिका देखि' किछु कहेन उत्तर ॥ ४८॥

एक-दिन प्रातः-काले आइला प्रभुर घर ।
पिपीलिका देखि' किछु कहेन उत्तर ॥ ४८॥

एक-दिन—एक दिन; **प्रातः-काले**—सुबह के समय; **आइला**—आया; **प्रभुर घर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर; **पिपीलिका देखि'**—अनेक चीटियाँ देखकर; **किछु कहेन उत्तर**—कुछ कहने लगा।

अनुवाद

एक दिन रामचन्द्र पुरी प्रातःकाल श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर

आया। बहुत सी चींटियाँ देखकर महाप्रभु की आलोचना करने की दृष्टि से उसने कुछ कहा।

"रात्रावत्र ऐक्षवमासीৎ, तेन पिपीलिकाः
सञ्चरन्ति। अहो! विरक्तानां सन्न्यासिनामियमिन्द्रिय-
लालसेति ब्रुवन्नुत्थाय गतः॥" ४९॥

**"रात्रावत्र ऐक्षवमासीत्, तेन पिपीलिकाः
सञ्चरन्ति। अहो! विरक्तानां सन्न्यासिनामियमिन्द्रिय-
लालसेति ब्रुवन्नुत्थाय गतः॥" ४९॥**

रात्रौ—रात को; **अत्र**—यहाँ; **ऐक्षवम्**—मिश्री; **आसीत्**—थी; **तेन**—उसके कारण; **पिपीलिकाः**—चीटियाँ; **सञ्चरन्ति**—घूम रही हैं; **अहो**—हाय; **विरक्तानाम्**—वैरागियों की; **सन्न्यासिनाम्**—संन्यासियों की; **इयम्**—यह; **इन्द्रिय**—इन्द्रियों की; **लालस**—आसक्ति; **इति**—यह; **ब्रुवन्**—कहकर; **उत्थाय**—उठकर; **गतः**—चला गया।

अनुवाद

उसने कहा, "गत रात्रि में यहाँ मिश्री थी, इसलिए यहाँ पर चींटियाँ घूम रही हैं। हाय, यह विरक्त संन्यासी ऐसी इन्द्रियतृप्ति में आसक्त है!" इस तरह कहकर वह उठा और चला गया।

प्रभु परम्पराय निन्दा कैराछेन श्रवण ।
एबे साक्षात्शुनिलेन 'कल्पित' निन्दन ॥५०॥

**प्रभु परम्पराय निन्दा कैराछेन श्रवण ।
एबे साक्षात् शुनिलेन 'कल्पित' निन्दन ॥५०॥**

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **परम्पराय**—अन्यों से; **निन्दा**—निन्दा; **कैराछेन श्रवण**—सुनी थी; **एबे**—अब; **साक्षात्**—प्रत्यक्ष; **शुनिलेन**—वे सुनते हैं; **कल्पित**—झूठी; **निन्दन**—निन्दा।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामचन्द्र पुरी द्वारा की जाने वाली निन्दा की अफवाहें तो सुन रखी थीं, किन्तु अब तो उन्होंने उसके मनगढ़ंत आरोपों को प्रत्यक्ष सुना।

तात्पर्य

रामचन्द्र पुरी को श्री चैतन्य महाप्रभु के चरित्र में कोई दोष नहीं मिला, क्योंकि वे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के दिव्य पद पर स्थित थे। चींटियाँ सामान्यतया सर्वत्र पाई जाती हैं, किन्तु जब रामचन्द्र पुरी ने चींटियों को महाप्रभु के स्थान पर चलते देखा, तो उसने यह मान लिया कि वे वहाँ पर श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा मिठाई खाने से आई होंगी। इस तरह उसने महाप्रभु में कल्पित दोष ढूँढ निकाला और तब वह चला गया।

सहजेइ पिपीलिका सर्वत्र बेड़ाय ।
ताहाते तर्क उठाञा दोष लागाय ॥५१॥

सहजेइ पिपीलिका सर्वत्र बेड़ाय ।
ताहाते तर्क उठाञा दोष लागाय ॥५१॥

सहजेइ—सामान्यतया; **पिपीलिका**—चीटियाँ; **सर्वत्र**—सब जगह; **बेड़ाय**—घूमती हैं; **ताहाते**—उसके कारण; **तर्क उठाञा**—विवाद खड़ा करके; **दोष लागाय**—दोष लगाया।

अनुवाद

चींटियाँ सामान्यतया यहाँ, वहाँ तथा सर्वत्र घूमती रहती हैं, किन्तु रामचन्द्र पुरी तो काल्पनिक दोष की ताक में था, अतएव उसने यह आरोप लगाते हुए महाप्रभु की आलोचना की कि उनके कमरे में मिठाइयाँ रही होंगी।

शुनि' ताहा प्रभुर सङ्कोच-भय मने ।
गोविन्दे बोलाञा किछु कहेन वचने ॥५२॥

शुनि' ताहा प्रभुर सङ्कोच-भय मने ।
गोविन्दे बोलाञा किछु कहेन वचने ॥५२॥

शुनि'—सुनकर; **ताहा**—वह; **प्रभुर**—श्री चैतन्य को; **सङ्कोच**—संशय; **भय**—भय; **मने**—मन में; **गोविन्दे बोलाञा**—गोविन्द को बुलाकर; **किछु**—कुछ; **कहेन**—बोले; **वचने**—वचन।

अनुवाद

यह आलोचना सुनने के बाद महाप्रभु को संशय तथा भय हुआ। इसलिए उन्होंने गोविन्द को बुलाकर इस प्रकार आदेश दिया।

"आजि हैते भिक्षा आमार एई त' नियम ।
पिण्डा-भोगेर एक चौठि, पाँच-गण्डार व्यञ्जन ॥५३॥

"आजि हैते भिक्षा आमार एइ त' नियम ।
पिण्डा-भोगेर एक चौठि, पाँच-गण्डार व्यञ्जन ॥५३॥

आजि हैते—आज से; **भिक्षा आमार**—मेरा प्रसाद ग्रहण करने का; **एइ**—यह; **त'**—निश्चित; **नियम**—नियम; **पिण्डा-भोगेर**—भगवान् जगन्नाथ के प्रसाद का; **एक चौठि**—एक पात्र का एक चौथाई; **पाँच-गण्डार व्यञ्जन**—पांच गंडा मूल्य की सब्जियाँ (एक गंडा चार कौड़ियों के बराबर है)।

अनुवाद

"आज से यह नियम होगा कि मैं जगन्नाथजी के प्रसाद का एक चौथाई मात्र तथा पाँच गण्डा मूल्य की सब्जियाँ ग्रहण किया करूँगा।

इहा बई अधिक आर किछु ना आनिवा ।
अधिक आनिले आमा एथा ना देखिवा'' ॥५४॥

इहा बइ अधिक आर किछु ना आनिबा ।
अधिक आनिले आमा एथा ना देखिबा" ॥५४॥

इहा बइ—इसके अलावा; **अधिक**—अधिक; **आर**—और ज्यादा; **किछु**—कुछ; **ना आनिबा**—मत लाओ; **अधिक आनिले**—यदि अधिक लाये; **आमा**—मुझे; **एथा**—यहाँ; **ना देखिबा**—तुम नहीं देखोगे।

अनुवाद

"यदि तुम इससे अधिक कुछ भी लाये, तो तुम मुझे यहाँ नहीं देखोगे।"

सकल वैष्णवे गोविन्द कहे एई वाৎ ।
शुनि' सबार माथे यैछे हैल वज्राघात ॥५५॥

सकल वैष्णवे गोविन्द कहे एइ बात् ।
शुनि' सबार माथे ग्रैछे हैल वज्राघात ॥५५॥

सकल वैष्णवे—सभी वैष्णवों को; **गोविन्द**—गोविन्द; **कहे**—बताते हैं; **एइ बात्**—यह सन्देश; **शुनि'**—सुनकर; **सबार माथे**—सभी के सिर पर; **ग्रैछे**—मानो; **हैल**—हो गया; **वज्र-आघात**—वज्र का प्रहार।

अनुवाद

गोविन्द ने यह सूचना सारे भक्तों को पहुँचा दी। जब उन्होंने इसे सुना, तो उन्हें लगा कि उनके सिरों पर वज्रपात हो गया है।

রামচন্দ্র-পুরীকে সবায় দেয় তিরস্কার ।
'এই পাপিষ্ঠ আসি' প্রাণ লইল সবার' ॥৫৬॥

রামচন্দ্র-পুরীকে সবায় দেয় তিরস্কার ।
'এই পাপিষ্ঠ আসি' প্রাণ লইল সবার' ॥৫৬॥

रामचन्द्र-पुरीके—रामचन्द्र पुरी को; **सबाय**—सभी भक्तों ने; **देय तिरस्कार**—तिरस्कृत किया; **एइ पापिष्ठ**—यह पापी व्यक्ति; **आसि'**—आकर; **प्राण**—प्राण; **लइल**—ले लिया; **सबार**—सब के।

अनुवाद

सारे भक्तों ने यह कहकर रामचन्द्र पुरी को धिक्कारा, "यह पापी व्यक्ति यहाँ आया हुआ है और इसने हमारे प्राण ले लिये हैं।"

সেই-দিন এক-বিপ্র কৈল নিমন্ত্রণ ।
এক-চৌঠি ভাত, পাঁচ-গণ্ডার ব্যঞ্জন ॥৫৭॥
এই-মাত্র গোবিন্দ কৈল অঙ্গীকার ।
মাথায় ঘা মারে বিপ্র, করে হাহাকার ॥৫৮॥

সেই-দিন এক-বিপ্র কৈল নিমন্ত্রণ ।
এক-চৌঠি ভাত, পাঁচ-গণ্ডার ব্যঞ্জন ॥৫৭॥
এই-মাত্র গোবিন্দ কৈল অঙ্গীকার ।
মাথায় ঘা মারে বিপ্র, করে হাহাকার ॥৫৮॥

सेइ-दिन—उस दिन; **एक-विप्र**—एक ब्राह्मण ने; **कैल निमन्त्रण**—निमंत्रित किया;

एक-चौठि भात—एक पात्र का चौथा हिस्सा; **पाँच-गण्डार व्यञ्जन**—पाँच गंडा मूल्य की सब्जियाँ; **एइ-मात्र**—केवल यही; **गोविन्द**—गोविन्द ने; **कैल अङ्गीकार**—स्वीकार किये; **माथाय**—अपना सिर; **घा मारे**—पीटकर; **विप्र**—ब्राह्मण; **करे हाहा-कार**—'हाय-हाय' करने लगा।

अनुवाद

उस दिन एक ब्राह्मण ने श्री चैतन्य महाप्रभु को निमन्त्रण दिया। जब गोविन्द ने केवल पाँच गण्डा मूल्य की सब्जियाँ तथा अन्नपात्र का एक चौथाई अन्न स्वीकार किया, तो उस ब्राह्मण ने निराशावश अपना माथा पीटा और चिल्लाया, "हाय! हाय!"

সেই ভাত-ব্যঞ্জন প্রভু অর্দ্ধেক খাইল ।
যে কিছু রহিল, তাহা গোবিন্দ পাইল ॥৫৯॥

सेइ भात-व्यञ्जन प्रभु अर्धेक खाइल ।
ये किछु रहिल, ताहा गोविन्द पाइल ॥ ५९ ॥

सेइ—वह; **भात**—भात; **व्यञ्जन**—सब्जी; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **अर्धेक खाइल**—आधी खाई; **ये किछु रहिल**—जो कुछ बच गया; **ताहा**—वह; **गोविन्द**—गोविन्द ने; **पाइल**—लिया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने आधा चावल तथा आधी सब्जियाँ ही खाईं और जो बचा रहा, उसे गोविन्द ने ग्रहण किया।

অর্দ্ধাশন করেন প্রভু, গোবিন্দ অর্দ্ধাশন ।
সব ভক্ত-গণ তবে ছাড়িল ভোজন ॥৬০॥

अर्धाशन करेन प्रभु, गोविन्द अर्धाशन ।
सब भक्त-गण तबे छाड़िल भोजन ॥ ६० ॥

अर्ध-अशन करेन—आधा खाते; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **गोविन्द**—गोविन्द; **अर्ध-अशन**—आधा खाता; **सब भक्त-गण**—सभी भक्तों ने; **तबे**—उस समय; **छाड़िल भोजन**—भोजन छोड़ दिया।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु तथा गोविन्द आधापेट भोजन करते। इसके कारण अन्य सारे भक्तों ने भोजन करना त्याग दिया।

গোবিন্দ-কাশীশ্বরে প্রভু কৈলা আজ্ঞাপন ।
'দুঁহে অন্যত্র মাগি' কর উদর ভরণ' ॥৬১॥

গোবিন্দ-কাশীশ্বরে প্রভু কৈলা আজ্ঞাপন ।
'দুঁহে অন্যত্র মাগি' কর উদর ভরণ' ॥৬১॥

गोविन्द-काशीश्वरे—गोविन्द और काशीश्वर को; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कैला**—दिया; **आज्ञापन**—आदेश; **दुँहे**—तुम दोनों; **अन्यत्र**—कहीं ओर से; **मागि'**—माँगकर; **कर उदर भरण**—पेट भर लो।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने गोविन्द तथा काशीश्वर को आज्ञा दी, "तुम दोनों अपना पेट भरने के लिए अन्यत्र भिक्षा ग्रहण कर सकते हो।"

এই-রূপ মহা-দুঃখে দিন কত গেল ।
শুনি' রামচন্দ্র-পুরী প্রভু-পাশ আইল ॥৬২॥

এই-রূপ মহা-দুঃখে দিন কত গেল ।
শুনি' রামচন্দ্র-পুরী প্রভু-পাশ আইল ॥৬২॥

এइ-रूप—इस प्रकार; **महा-दुःखे**—महान् दुःख में; **दिन कत**—कुछ दिन; **गेल**—बीत गये; **शुनि'**—सुनकर; **रामचन्द्र-पुरी**—रामचन्द्र पुरी; **प्रभु-पाश आइल**—श्री चैतन्य महाप्रभु के पास आया।

अनुवाद

इस तरह से कुछ दिन अतीव दुःख में बीते। यह सब सुनकर रामचन्द्र पुरी श्री चैतन्य महाप्रभु के पास गया।

প্রণাম করি' প্রভু কৈলা চরণ বন্দন ।
প্রভুরে কহয়ে কিছু হাসিয়া বচন ॥৬৩॥

प्रणाम करि' प्रभु कैला चरण वन्दन ।
प्रभुरे कहये किछु हासिया वचन ॥ ६३ ॥

प्रणाम करि'—प्रणाम करके; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **कैला चरण वन्दन**—चरणवन्दन किये; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु से; **कहये**—वह कहता है; **किछु**—कुछ; **हासिया**—हँसकर; **वचन**—वचन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामचन्द्र पुरी के चरणों की पूजा करके उसे नमस्कार किया। तब वह हँसा और महाप्रभु से बोला।

''सन्न्यासीर धर्म नहे 'इन्द्रिय-तर्पण' ।
यैछे तैछे करे मात्र उदर भरण ॥ ६४ ॥
"सन्न्यासीर धर्म नहे 'इन्द्रिय-तर्पण' ।
यैछे तैछे करे मात्र उदर भरण ॥ ६४ ॥

सन्न्यासीर—एक संन्यासी का; **धर्म**—धर्म; **नहे**—नहीं है; **इन्द्रिय-तर्पण**—इन्द्रिय भोग; **यैछे तैछे**—किसी तरह से; **करे**—करता है; **मात्र**—केवल; **उदर भरण**—पेट भरना।

अनुवाद

रामचन्द्र पुरी ने परामर्श दिया, "यह संन्यासी का कर्तव्य नहीं है कि वह अपनी इन्द्रियों की तृप्ति करे। उसे तो किसी भी तरह अपना पेट भरना चाहिए।

तोमारे क्षीण देखि, शुनि,—कर अर्धाशन ।
एइ 'शुष्क-वैराग्य' नहे सन्न्यासीर 'धर्म' ॥ ६५ ॥
तोमारे क्षीण देखि, शुनि,—कर अर्धाशन ।
एइ 'शुष्क-वैराग्य' नहे सन्न्यासीर 'धर्म' ॥ ६५ ॥

तोमारे—आपने; **क्षीण**—दुबला; **देखि**—मैं देख रहा हूँ; **शुनि**—मैंने सुना है; **कर अर्ध-अशन**—आप आधा खा रहे हैं; **एइ**—यह; **शुष्क-वैराग्य**—शुष्क वैराग्य; **नहे**—नहीं है; **सन्न्यासीर धर्म**—संन्यासी का धर्म।

अनुवाद

"मैंने सुना है कि आपने अपना भोजन आधा कर दिया है। मैं देख रहा हूँ कि आप दुर्बल हैं। ऐसा शुष्क वैराग्य भी संन्यासी का धर्म नहीं है।

यथा-योग्य उदर भरे, ना करे 'विषय' भोग ।
सन्न्यासीर तबे सिद्ध हय ज्ञान-योग ॥६६॥

यथा-योग्य उदर भरे, ना करे 'विषय' भोग ।
सन्न्यासीर तबे सिद्ध हय ज्ञान-योग ॥६६॥

यथा-योग्य—जितना जरूरी है; **उदर भरे**—पेट भरता है; **ना करे**—नहीं करता; **विषय भोग**—भौतिक भोग; **सन्न्यासीर**—संन्यासी की; **तबे**—कब; **सिद्ध**—सफल; **हय**—होती है; **ज्ञान-योग**—आध्यात्मिक ज्ञान में प्रगति।

अनुवाद

"संन्यासी तो अपने शरीर के पालन के लिए जितना चाहिए उतना ही खाता है, किन्तु वह अपनी भौतिक इन्द्रियों की तुष्टि नहीं करता। संन्यासी इसी तरह से अपने आध्यात्मिक ज्ञान में पूर्ण बनता है।

नात्यश्नतोऽपि योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः ।
न चाति-स्वप्न-शीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥६७॥
युक्ताहार-विहारस्य युक्त-चेष्टस्य कर्मसू ।
युक्त-स्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःख-हा'' ॥६८॥

नात्यश्नतोऽपि योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः ।
न चाति-स्वप्न-शीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥६७॥
युक्ताहार-विहारस्य युक्त-चेष्टस्य कर्मसु ।
युक्त-स्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःख-हा" ॥६८॥

न—नहीं; **अति-अश्नतः**—जो बहुत अधिक खाता है; **अपि**—तथा; **योगः**—भगवान् से सम्बन्ध; **अस्ति**—होता है; **न**—न; **च**—तथा; **एकान्तम्**—पूर्णतः; **अनश्नतः**—जो खाता ही नहीं; **न**—नहीं; **च**—तथा; **अति-स्वप्न-शीलस्य**—जो नींद में अत्यधिक सपने लेता है; **जाग्रतः**—जो जागृत रहता है; **न**—नहीं; **एव**—निश्चय ही; **च**—तथा; **अर्जुन**—हे अर्जुन; **युक्त**—जितना जरूरी है उतना; **आहार**—भोजन; **विहारस्य**—जिसका इन्द्रिय भोग; **युक्त**—

संतुलित; **चेष्टस्य**—जिसके प्रयास; **कर्मसु**—कर्म करने में; **युक्त**—जितने जरूरी है; **स्वप्न**—सोते हुए स्वप्न; **अवबोधस्य**—जागने से; **योगः**—योग का अभ्यास; **भवति**—होता है; **दुःख-हा**—कष्ट दूर करने वाला।

अनुवाद

"[भगवान् कृष्ण ने कहा :] 'हे अर्जुन, जो अधिक खाता है या बहुत कम खाता है, जो अधिक सोता है और बहुत स्वप्न देखता है, अथवा जो पर्याप्त नहीं सोता, उसके योगी बनने की कोई सम्भावना नहीं है। जो खाने, सोने, आमोद-प्रमोद तथा कार्य करने के अभ्यास में नियमित रहता है, वह योगाभ्यास द्वारा समस्त भौतिक क्लेशों से मुक्त रह सकता है।"

तात्पर्य

यह उद्धरण *भगवद्गीता* (६.१६-१७) से लिया गया है।

প্রভু কহে,—"অজ্ঞ বালক মুই 'শিষ্য' তোমার ।
মোরে শিক্ষা দেহ',—এই ভাগ্য আমার" ॥৬৯॥

প্রভু কহে,—"অজ্ঞ বালক মুঞি 'শিষ্য' তোমার ।
মোরে শিক্ষা দেহ',—এই ভাগ্য আমার" ॥ ৬৯ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **अज्ञ**—अज्ञानी; **बालक**—बालक; **मुइ**—मैं; **शिष्य तोमार**—आपका शिष्य; **मोरे**—मुझे; **शिक्षा देह'**—आप उपदेश दे रहे हैं; **एइ**—यह; **भाग्य आमार**—मेरा महा सौभाग्य है।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने विनयपूर्वक निवेदन किया, "मैं एक नादान बालक के समान हूँ और आपके शिष्य के समान हूँ। यह मेरा बड़ा सौभाग्य है कि आप मुझे शिक्षा दे रहे हैं।"

এত শুনি' রামচন্দ্র-পুরী উঠি' গেলা ।
ভক্ত-গণ অর্ধাশন করে,—পুরী গোসাঞি শুনিলা ॥৭০॥

এত শুনি' রামচন্দ্র-পুরী উঠি' গেলা ।
ভক্ত-গণ অর্ধাশন করে,—পুরী গোসাঞি শুনিলা ॥ ৭০ ॥

एत शुनि'—यह सुनकर; **रामचन्द्र-पुरी**—रामचन्द्र पुरी; **उठि' गेला**—उठकर चला गया; **भक्त-गण**—भक्त; **अर्ध-अशन करे**—आधा भोजन कर रहे हैं; **पुरी गोसाञि**—रामचन्द्र पुरी ने; **शुनिला**—सुना।

अनुवाद

यह सुनकर रामचन्द्र पुरी उठा और चला गया। उसने विभिन्न स्त्रोतों से यह भी सुना कि श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्त आधे पेट भोजन कर रहे हैं।

आर दिन भक्त-गण-सह परमानन्द-पूरी ।
प्रभु-पाशे निवेदिला दैन्य-विनय करि' ॥७१॥

आर दिन भक्त-गण-सह परमानन्द-पुरी ।
प्रभु-पाशे निवेदिला दैन्य-विनय करि' ॥७१॥

आर दिन—अगले दिन; **भक्त-गण-सह**—अन्य भक्तों के साथ; **परमानन्द-पुरी**—परमानन्द पुरी; **प्रभु-पाशे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के सामने; **निवेदिला**—निवेदन किया; **दैन्य-विनय करि'**—अति विनम्रतापूर्वक।

अनुवाद

अगले दिन, परमानन्द पुरी तथा अन्य भक्त अत्यन्त दीनता तथा विनयपूर्वक श्री चैतन्य महाप्रभु के पास पहुँचे।

"रामचन्द्र-पूरी हय निन्दुक-स्वभाव ।
तार बोले अन्न छाड़ि' किवा हबे लाभ? ॥७२॥

"रामचन्द्र-पुरी हय निन्दुक-स्वभाव ।
तार बोले अन्न छाड़ि' किबा हबे लाभ? ॥७२॥

रामचन्द्र-पुरी—रामचन्द्र पुरी; **हय**—है; **निन्दुक-स्वभाव**—स्वभाव से निन्दक; **तार बोले**—उसके शब्दों पर; **अन्न छाड़ि'**—ठीक से खाना छोड़कर; **किबा**—क्या; **हबे**—होगा; **लाभ**—लाभ।

अनुवाद

परमानन्द पुरी ने कहा, "मेरा गुरुभाई रामचन्द्र पुरी स्वभाव से बुरा

आलोचक है। यदि आप उसके शब्दों के कारण भोजन करना त्यागते हैं, तो इससे क्या लाभ होगा?

পুরীর স্বভাব,—যথেষ্ট আহার করাঞা ।
যে না খায়, তারে খাওয়ায় যতন করিয়া ॥৭৩॥

पुरीर स्वभाव,—ग्रथेष्ट आहार कराञा ।
ग्रे ना खाय, तारे खाओयाय ग्रतन करिया ॥ ७३ ॥

पुरीर स्वभाव—रामचन्द्र पुरी का चरित्र है; **ग्रथा-इष्ट**—जिनता अधिक हो सके; **आहार कराञा**—किसी को खिलाना; **ग्रे**—जो; **ना खाय**—नहीं खाता; **तारे खाओयाय**—उसे खिलाना; **ग्रतन करिया**—प्रयास करके।

अनुवाद

"यह तो रामचन्द्र पुरी का स्वभाव है कि वह पहले किसी को पेट भर खाने देता है और यदि कोई आवश्यकता से अधिक नहीं खाता, तो बड़े यत्न से वह उसे खिलाकर रहता है।

খাওয়াঞা পুনঃ তারে করয়ে নিন্দন ।
'এত অন্ন খাও,—তোমার কত আছে ধন? ॥৭৪॥

खाओयाञा पुनः तारे करये निन्दन ।
'एत अन्न खाओ,—तोमार कत आछे धन? ॥ ७४ ॥

खाओयाञा—खिलाने के बाद; **पुनः**—फिर; **तारे**—उसकी; **करये निन्दन**—निन्दा करता है; **एत**—इतना; **अन्न**—भोजन; **खाओ**—तुम खाते हो; **तोमार**—तुम्हारा; **कत**—कितना; **आछे**—है; **धन**—धन।

अनुवाद

"इस तरह वह किसी को भी आवश्यकता से अधिक खिलाता है और तब प्रत्यक्ष आलोचना करता है कि, "तुम इतना अधिक खाते हो। तुम्हारे खजाने में कितना धन है?

সন্ন্যাসীকে এত খাওয়াঞা কর ধর্ম নাশ! ।
অতএব জানিনু,—তোমার কিছু নাহি ভাস' ॥৭৫॥

सन्न्यासीके एत खाओयाजा कर धर्म नाश! ।
अतएव जानिनु,—तोमार किछु नाहि भास' ॥ ७५ ॥

सन्न्यासीके—संन्यासी को; **एत**—इतना अधिक; **खाओयाजा**—खिलाकर; **कर धर्म नाश**—तुम उनके धार्मिक नियम भ्रष्ट कर रहे हो; **अतएव**—इसलिए; **जानिनु**—मैं समझ सकता हूँ; **तोमार**—तुम्हारी; **किछु नाहि भास**—कुछ प्रगति नहीं हुई।

अनुवाद

"'यही नहीं, संन्यासियों को इतना अधिक खिलाकर तुम उनके धर्म का विनाश करते हो। इसलिए मैं समझ सकता हूँ कि तुममें कोई उन्नति नहीं है।'

কে কৈছে ব্যবহারে, কেবা কৈছে খায় ।
এই অনুসন্ধান তেঁহো করয় সদায় ॥ ৭৬ ॥
के कैछे व्यवहारे, केबा कैछे खाय ।
एइ अनुसन्धान तेंहो करय सदाय ॥ ७६ ॥

के—कौन; **कैछे**—कैसा; **व्यवहारे**—व्यवहार; **केबा**—कौन; **कैछे**—कैसे; **खाय**—खाता है; **एइ अनुसन्धान**—यह खोज; **तेंहो**—वह; **करय**—करता है; **सदाय**—हमेशा।

अनुवाद

"यह तो रामचन्द्र पुरी का धंधा बन चुका है कि वह सदैव अन्यों के बारे में पूछताछ करता रहता है कि वे किस तरह खाते हैं और नित्य प्रति किस तरह का व्यवहार करते हैं।

শাস্ত্রে যেই দুই ধর্ম কৈরাছে বর্জন ।
সেই কর্ম নিরন্তর ইঁহার করণ ॥ ৭৭ ॥
शास्त्रे येइ दुइ धर्म कैराछे वर्जन ।
सेइ कर्म निरन्तर इँहार करण ॥ ७७ ॥

शास्त्रे—शास्त्रों में; **येइ**—जो; **दुइ**—दो; **धर्म**—कर्म; **कैराछे वर्जन**—वर्जित किये गये हैं; **सेइ**—वे; **कर्म**—कार्य; **निरन्तर**—सदैव; **इँहार**—उसके; **करण**—कर्म।

अनुवाद

"शास्त्रों में जिन दो प्रकार के कर्मों का निषेध हुआ है, वे ही उसके नित्य कर्म हैं।

पर-स्वभाव-कर्माणि न प्रशंसेन्न गर्हयेत् ।
विश्वमेकात्मकं पश्यन्प्रकृत्या पूरुषेण च ॥७८॥

पर-स्वभाव-कर्माणि न प्रशंसेन्न गर्हयेत् ।
विश्वमेकात्मकं पश्यन्प्रकृत्या पुरुषेण च ॥७८॥

पर-स्वभाव-कर्माणि—दूसरों के कार्यों की; **न**—न; **प्रशंसेत्**—प्रशंसा; **न**—न; **गर्हयेत्**—निन्दा; **विश्वम्**—संसार को; **एक-आत्मकम्**—एक समान; **पश्यन्**—देखना; **प्रकृत्या**—स्वभाव से; **पुरुषेण**—जीवों द्वारा; **च**—तथा।

अनुवाद

"'मनुष्य को यह देखना चाहिए कि भौतिक प्रकृति तथा जीव के संयोग के फलस्वरूप यह ब्रह्माण्ड स्वभाव से कार्यशील है। इसलिए अन्यों के स्वभावों या कर्मों की न तो प्रशंसा करनी चाहिए, न आलोचना।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (११.२८.१) से लिया गया है, जिसे कृष्ण ने उद्धव से कहा है।

तार मध्ये पूर्व-विधि 'प्रशंसा' छाड़िया ।
पर-विधि 'निन्दा' करे 'बलिष्ठ' जानिया ॥७९॥

तार मध्ये पूर्व-विधि 'प्रशंसा' छाड़िया ।
पर-विधि 'निन्दा' करे 'बलिष्ठ' जानिया ॥७९॥

तार मध्ये—दोनों में से; **पूर्व-विधि**—पहला कार्य; **प्रशंसा**—तारीफ; **छाड़िया**—छोड़कर; **पर-विधि**—दूसरा कार्य; **निन्दा**—निन्दा करना; **करे**—करता है; **बलिष्ठ जानिया**—इसे प्रमुख मानकर।

अनुवाद

"इन दो नियमों में से रामचन्द्र पुरी प्रशंसा करना छोड़कर पहले नियम

का पालन करता है, किन्तु यह जानते हुए भी कि दूसरा नियम अधिक प्रमुख है, वह अन्यों की आलोचना करके उसकी उपेक्षा कर देता है।

तात्पर्य

श्रीमद्भागवत का उपर्युक्त श्लोक दो आदेश देता है। पहला *पूर्व-विधि* है, जिसमें किसी की प्रशंसा नहीं की जाती और दूसरा *पर-विधि* है, जिसमें किसी की आलोचना नहीं की जाती। जैसाकि अगले श्लोक से पता चलेगा, प्रशंसा के विरुद्ध जो आदेश है, वह निन्दा के विरुद्ध आदेश से कम महत्त्वपूर्ण है। मनुष्य को सावधानी से *पर-विधि* का पालन करना चाहिए और चाहे तो वह *पूर्वविधि* की उपेक्षा कर सकता है। इस तरह वास्तविक आदेश यह है कि मनुष्य प्रशंसा तो करे, किन्तु आलोचना न करे। यह *श्लेषोक्ति* कहलाती है— अर्थात् दो अर्थों वाली उक्ति। किन्तु रामचन्द्र पुरी इससे ठीक विपरीत करता था, क्योंकि वह *पर-विधि* की अवहेलना करके *पूर्वविधि* का कड़ाई से पालन करता रहा। चूँकि वह आलोचना न करने के नियम से अपने आपको बचाता रहा, इसलिए उसने दोनों ही नियमों को तोड़ा।

পূর্ব-পরয়োর্মধ্যে পর-বিধির্বলবান্ ॥৮০॥

पूर्व-परयोर्मध्ये पर-विधिर्बलवान् ॥८०॥

पूर्व-परयोः—पिछले और पहले के; **मध्ये**—बीच; **पर-विधिः**—दूसरा; **बलवान्**— अधिक विशेष होता है।

अनुवाद

"'पहले के और बाद के नियमों में से बाद का नियम ही अधिक महत्त्वपूर्ण है।'

तात्पर्य

यह श्लोक न्याय ग्रंथों से हैं।

যাহাঁ গুণ শত আছে, তাহা না করে গ্রহণ ।
গুণ-মধ্যে ছলে করে দোষ-আরোপণ ॥৮১॥

ग्राहाँ गुण शत आछे, ताहा ना करे ग्रहण ।
गुण-मध्ये छले करे दोष-आरोपण ॥८१॥

याहाँ—जहाँ; **गुण**—अच्छे गुण; **शत**—सैंकड़ों; **आछे**—हैं; **ताहा**—उन्हें; **ना करे ग्रहण**—स्वीकार नहीं करता; **गुण-मध्ये**—इन गुणों में; **छले**—छलपूर्वक; **करे**—करता है; **दोष-आरोपण**—दोषारोपण।

अनुवाद

"एक आलोचक सैकड़ों अच्छे गुणों के होने पर भी उन पर विचार नहीं करता। प्रत्युत वह किसी न किसी चाल से उन गुणों में दोष निकाल लेता है।

ইঁহার স্বভাব ইহাঁ করিতে না যুয়ায় ।
তথাপি কহিয়ে কিছু মর্ম-দুঃখ পায় ॥৮২॥

इँहार स्वभाव इहाँ करिते ना युयाय ।
तथापि कहिये किछु मर्म-दुःख पाय ॥८२॥

इँहार स्वभाव—इसका स्वभाव; **इहाँ**—यहाँ; **करिते ना युयाय**—पालन नहीं करना चाहिए; **तथापि**—फिर भी; **कहिये**—मैं कहता हूँ; **किछु**—कुछ; **मर्म-दुःख**—हृदय में दुःख; **पाय**—प्राप्त करके।

अनुवाद

"इसलिए किसी को रामचन्द्र पुरी के सिद्धान्तों का अनुगमन नहीं करना चाहिए। तो भी मुझे उसके विरुद्ध कुछ कहना पड़ रहा है, क्योंकि वह हमारे हृदयों को दुःखी कर रहा है।

ইঁহার বচনে কেনে অন্ন ত্যাগ কর? ।
পূর্ববত্নিমন্ত্রণ মান',—সবার বোল ধর'' ॥৮৩॥

इँहार वचने केने अन्न त्याग कर? ।
पूर्ववत् निमन्त्रण मान',—सबार बोल धर" ॥८३॥

इँहार वचने—उसके शब्दों द्वारा; **केने**—क्यों; **अन्न**—भोजन; **त्याग कर**—आप त्यागते हैं; **पूर्व-वत्**—पहले की तरह; **निमन्त्रण मान'**—कृपया निमन्त्रण स्वीकार करें; **सबार**—सभी के; **बोल**—वचन; **धर**—स्वीकार कर।

अनुवाद

"आपने रामचन्द्र पुरी की आलोचना के कारण ठीक से भोजन करना

क्यों छोड़ दिया है? कृपया पहले की तरह निमन्त्रण स्वीकार करें। यही हम सबकी प्रार्थना है।"

প্রভু কহে,—"সবে কেনে পুরীরে কর রোষ? ।
'সহজ' ধর্ম কহে তেঁহো, তাঁর কিবা দোষ? ॥৮৪॥

প্রভু কহে,—"সবে কেনে পুরীরে কর রোষ? ।
'সহজ' ধর্ম কহে তেঁহো, তাঁর কিবা দোষ? ॥৮৪॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **सबे**—आप सभी; **केने**—क्यों; **पुरीरे**—रामचन्द्र पुरी पर; **कर रोष**—क्रोधित हैं; **सहज**—स्वाभाविक; **धर्म**—धर्म के सिद्धान्त; **कहे**—कहते हैं; **तेंहो**—वे; **ताँर**—उनका; **किबा**—क्या; **दोष**—दोष।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "आप सब लोग रामचन्द्र पुरी से रुष्ट क्यों हैं? वे संन्यास जीवन के स्वाभाविक सिद्धान्तों को बता रहे हैं। आप लोग उन्हें क्यों दोष दे रहे हैं?

যতি হঞা জিহ্বা-লাম্পট্য—অত্যন্ত অন্যায় ।
যতির ধর্ম,—প্রাণ রাখিতে আহার-মাত্র খায়'' ॥৮৫॥

যতি হঞা জিহ্বা-লাম্পট্য—অত্যন্ত অন্যায় ।
যতির ধর্ম,—প্রাণ রাখিতে আহার-মাত্র খায়" ॥৮৫॥

यति हञा—संन्यासी होकर; **जिह्वा-लाम्पट्य**—जीभ को सन्तुष्ट करने में लगना; **अत्यन्त अन्याय**—बड़ा अपराध; **यतिर धर्म**—संन्यासी का कर्तव्य; **प्राण राखिते**—जीवन की रक्षा के लिए; **आहार**—भोजन; **मात्र**—केवल; **खाय**—खाता है।

अनुवाद

"एक संन्यासी के लिए जिह्वा की तुष्टि में लगना महान् अपराध है। संन्यासी का कर्तव्य है कि जितना शरीर और आत्मा को एक साथ रखने के लिए आवश्यक हो, उतना ही खाना चाहिए।"

তবে সবে মেলি' প্রভুরে বহু যত্ন কৈলা ।
সবার আগ্রহে প্রভু অর্ধেক রাখিলা ॥৮৬॥

तबे सबे मेलि' प्रभुरे बहु यत्न कैला ।
सबार आग्रहे प्रभु अर्धेक राखिला ॥ ८६ ॥

तबे—फिर; **सबे मेलि'**—जब सभी भक्त मिलकर; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु से; **बहु यत्न कैला**—बहुत प्रार्थना किये; **सबार आग्रहे**—सभी के अत्यन्त आग्रह के कारण; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **अर्धेक राखिला**—आधा खाया।

अनुवाद

सबने मिलकर अनुनय-विनय की कि श्री चैतन्य महाप्रभु पूरा भोजन किया करें, तो भी महाप्रभु वैसा करने के लिए राजी नहीं हुए। प्रत्युत उन्होंने पहले का आधा ग्रहण करना स्वीकार करके उनके अनुरोध का उत्तर दिया।

दुइ-पण कौड़ि लागे प्रभुर निमन्त्रणे ।
कभु दुइ-जन भोक्ता, कभु तिन-जने ॥ ८७ ॥

दुइ-पण कौड़ि लागे प्रभुर निमन्त्रणे ।
कभु दुइ-जन भोक्ता, कभु तिन-जने ॥ ८७ ॥

दुइ-पण कौड़ि—दो पण कौड़ी; **लागे**—खर्च; **प्रभुर निमन्त्रणे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को निमंत्रित करने में; **कभु**—कभी; **दुइ-जन**—दो लोग; **भोक्ता**—खाने; **कभु**—कभी; **तिन-जने**—तीन लोग।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु को निमन्त्रण देने के लिए आवश्यक भोजन का मूल्य दो पण कौड़ियाँ (१६० कौड़ियाँ) निश्चित की गई और उस भोजन को दो व्यक्ति, तो कभी-कभी तीन व्यक्ति खाया करते।

अभोज्यान्न विप्र यदि करेन निमन्त्रण ।
प्रसाद-मूल्य लइते लागे कौड़ि दुइ-पण ॥ ८८ ॥

अभोज्यान्न विप्र यदि करेन निमन्त्रण ।
प्रसाद-मूल्य लइते लागे कौड़ि दुइ-पण ॥ ८८ ॥

अभोज्य-अन्न विप्र—वह ब्राह्मण जिसके घर पर निमन्त्रण स्वीकार नहीं किया जा

सकता; **ग्रदि**—यदि; **करेन निमन्त्रण**—वही निमन्त्रण देता; **प्रसाद-मूल्य**—प्रसाद का मूल्य; **लइते**—खर्च करते; **लागे**—कीमत; **कौड़ि दुइ-पण**—कौड़ियों के दो पण।

अनुवाद

यदि ऐसा ब्राह्मण निमन्त्रण देता, जिसके घर का निमन्त्रण स्वीकार नहीं किया जा सकता था, तो उसे प्रसाद खरीदने के लिए दो पण कौड़ियाँ देनी होती थीं।

ভোজ্যান্ন বিপ্র যদি নিমন্ত্রণ করে ।
কিছু 'প্রসাদ' আনে, কিছু পাক করে ঘরে ॥ ৮৯॥

भोज्यान्न विप्र ग्रदि निमन्त्रण करे ।
किछु 'प्रसाद' आने, किछु पाक करे घरे ॥ ८९ ॥

भोज्य-अन्न विप्र—ऐसा ब्राह्मण जिसको घर पर निमन्त्रण स्वीकार किया जा सकता है; **ग्रदि**—यदि; **निमन्त्रण करे**—निमन्त्रण देता है; **किछु**—कुछ; **प्रसाद**—प्रसाद; **आने**—लाता है; **किछु**—कुछ; **पाक करे**—पकाता है; **घरे**—घर पर।

अनुवाद

जब ऐसा ब्राह्मण निमन्त्रण देता, जिसके घर का निमन्त्रण स्वीकार किया जा सकता था, तो वह ब्राह्मण प्रसाद का कुछ अंश खरीदता और शेष को अपने घर में तैयार करता।

পণ্ডিত-গোসাঞি, ভগবানাচার্য, সার্বভৌম ।
নিমন্ত্রণের দিনে যদি করে নিমন্ত্রণ ॥ ৯০॥
তাঁ-সবার ইচ্ছায় প্রভু করেন ভোজন ।
তাহাঁ প্রভুর স্বাতন্ত্র্য নাই, যৈছে তাঁর মন ॥ ৯১॥

पण्डित-गोसाञि, भगवानाचार्य्य, सार्वभौम ।
निमन्त्रणेर दिने ग्रदि करे निमन्त्रण ॥ ९० ॥
ताँ-सबार इच्छाय प्रभु करेन भोजन ।
ताहाँ प्रभुर स्वातन्त्र्य नाइ, ग्रैछे ताँर मन ॥ ९१ ॥

पण्डित-गोसाञि—गदाधर पण्डित; **भगवान्-आचार्य्य**—भगवान् आचार्य; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **निमन्त्रणेर दिने**—जिस दिन चैतन्य महाप्रभु को अन्य कोई

निमंत्रित करते; **यदि**—यदि; **करे निमन्त्रण**—वे निमंत्रित करते; **ताँ-सबार**—उन सब की; **इच्छाय**—इच्छा द्वारा; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **करेन भोजन**—उसका प्रसाद ग्रहण करते; **ताहाँ**—उपस्थिति में; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु की; **स्वातन्त्र्य नाइ**—स्वतन्त्रता नहीं थी; **ग्रैछे**—जैसे; **ताँर**—उनके; **मन**—मन।

अनुवाद

यदि किसी दिन श्री चैतन्य महाप्रभु को भोजन करने का निमन्त्रण अन्यों के यहाँ से मिला रहता और यदि गदाधर पण्डित, भगवान् आचार्य या सार्वभौम भट्टाचार्य उन्हें निमन्त्रण देते, तो श्री चैतन्य महाप्रभु को तनिक भी छूट नहीं रहती थी। वे उनकी इच्छानुसार उनका निमन्त्रण स्वीकार कर लेते।

ভক্ত-গণে সুখ দিতে প্রভুর 'অবতার' ।
যাহাঁ যৈছে যোগ্য, তাহাঁ করেন ব্যবহার ॥৯২॥

भक्त-गणे सुख दिते प्रभुर 'अवतार' ।
याहाँ ग्रैछे ग्रोग्य, ताहाँ करेन व्यवहार ॥ ९२ ॥

भक्त-गणे—अपने भक्तों को; **सुख दिते**—आनन्द देने के लिए; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **अवतार**—अवतार; **याहाँ ग्रैछे ग्रोग्य**—देश, काल, पात्र के अनुसार जो भी उचित था; **ताहाँ करेन व्यवहार**—वे उसी अनुसार आचरण करते।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु का अवतार वस्तुतः भक्तों को सुख देने के लिए हुआ। इसीलिए समय तथा परिस्थिति के उपयुक्त उन्होंने व्यवहार किया।

কভু লৌকিক রীতি,—যেন 'ইতর' জন ।
কভু স্বতন্ত্র, করেন 'ঐশ্বর্য' প্রকটন ॥৯৩॥

कभु लौकिक रीति,—ग्रेन 'इतर' जन ।
कभु स्वतन्त्र, करेन 'ऐश्वर्य' प्रकटन ॥ ९३ ॥

कभु—कभी; **लौकिक रीति**—सामान्य व्यवहार; **ग्रेन**—जैसे; **इतर जन**—एक सामान्य व्यक्ति; **कभु**—कभी; **स्वतन्त्र**—पूर्णतः स्वतन्त्र; **करेन**—करते; **ऐश्वर्य प्रकटन**—दिव्य ऐश्वर्य प्रकट।

अनुवाद

पूर्ण स्वतन्त्र होने के कारण श्री चैतन्य महाप्रभु कभी सामान्य व्यक्ति की तरह आचरण करते और कभी अपना ईश्वरीय ऐश्वर्य प्रकट करते।

কভু রামচন্দ্র-পুরীর হয় ভৃত্য-প্রায় ।
কভু তারে নাহি মানে, দেখে তৃণ-প্রায় ॥৯৪॥

কভু রামচন্দ্র-পুরীর হয় ভৃত্য-প্রায় ।
কভু তারে নাহি মানে, দেখে তৃণ-প্রায় ॥৯৪॥

কভু—कभी; **রামচন্দ্র-পুরীর**—रामचन्द्र पुरी के; **হয়**—हो जाते; **ভৃত্য-প্রায়**—एक सेवक के समान; **কভু**—कभी; **তারে**—उसे; **নাহি মানে**—नहीं मानते; **দেখে**—देखते; **তৃণ-প্রায়**—एक तिनके के समान।

अनुवाद

वे कभी रामचन्द्र पुरी को अपना स्वामी मानते और अपने आपको उसका सेवक, तो कभी वे उसकी परवाह न करके उसे तिनके जैसा तुच्छ मानते।

ঈশ্বর-চরিত্র প্রভুর—বুদ্ধির অগোচর ।
যবে যেই করেন, সেই সব—মনোহর ॥৯৫॥

ঈশ্বর-চরিত্র প্রভুর—বুদ্ধির অগোচর ।
যবে যেই করেন, সেই সব—মনোহর ॥৯৫॥

ঈশ্বর-চরিত্র—परमेश्वर के समान चरित्र; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **বুদ্ধির অগোচর**—बुद्धि से परे; **যবে**—जब; **যেই**—जो भी; **করেন**—वे करते; **সেই**—वह; **সব**—सब कुछ; **মনোহর**—अत्यन्त मनमोहक।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् जैसा ही आचरण करते, जो किसी की भी बुद्धि की सीमा के परे होता। उन्होंने जो चाहा सो किया, किन्तु उनके सारे कार्य अतीव सुन्दर होते थे।

এই-মত রামচন্দ্র-পুরী নীলাচলে ।
দিন কত রহি' গেলা 'তীর্থ' করিবারে ॥৯৬॥

एइ-मत रामचन्द्र-पुरी नीलाचले ।
दिन कत रहि' गेला 'तीर्थ' करिबारे ॥ ९६ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **रामचन्द्र-पुरी**—रामचन्द्र पुरी; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी में; **दिन कत**—कुछ दिन; **रहि'**—रहकर; **गेला**—चला गया; **तीर्थ करिबारे**—तीर्थयात्रा के लिए।

अनुवाद

इस प्रकार रामचन्द्र पुरी कुछ दिनों तक नीलाचल (जगन्नाथ पुरी) में रहा। फिर वह विभिन्न तीर्थस्थानों की यात्रा करने चला गया।

তেঁহো গেলে প্রভুর গণ হৈল হরষিত ।
শিরের পাথর যেন পড়িল আচম্বিত ॥ ৯৭ ॥

तेंहो गेले प्रभुर गण हैल हरषित ।
शिरेर पाथर ग्रेन पड़िल आचम्बित ॥ ९७ ॥

तेंहो गेले—जब वह गया; **प्रभुर गण**—श्री चैतन्य महाप्रभु के अनुयायी; **हैल हरषित**—अत्यन्त प्रसन्न हुए; **शिरेर**—सिर से; **पाथर**—एक पत्थर; **ग्रेन**—मानो; **पड़िल**—गिर गया; **आचम्बित**—अचानक।

अनुवाद

भक्तगण रामचन्द्र पुरी को अपने सिर के भारी बोझ के समान मानते थे। अतएव जब वह जगन्नाथ पुरी से चला गया, तो वे अपने आपको अत्यन्त सुखी अनुभव करने लगे, मानो उनके सिर से भारी पत्थर का बोझ भूमि पर गिर गया हो।

স্বচ্ছন্দে নিমন্ত্রণ, প্রভুর কীর্তন-নর্তন ।
স্বচ্ছন্দে করেন সবে প্রসাদ ভোজন ॥ ৯৮ ॥

स्वच्छन्दे निमन्त्रण, प्रभुर कीर्तन-नर्तन ।
स्वच्छन्दे करेन सबे प्रसाद भोजन ॥ ९८ ॥

स्वच्छन्दे—स्वच्छन्द; **निमन्त्रण**—निमन्त्रण; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **कीर्तन-नर्तन**—नृत्य तथा कीर्तन; **स्वच्छन्दे**—पूर्ण स्वतन्त्रतापूर्वक; **करेन सबे**—सभी ने किया; **प्रसाद भोजन**—प्रसाद ग्रहण।

अनुवाद

उसके चले जाने के बाद सब लोग पुनः सुखी हुए। श्री चैतन्य महाप्रभु सदा की तरह निमन्त्रण स्वीकार करने लगे और सामूहिक कीर्तन तथा नृत्य का नेतृत्व करने लगे। हर कोई बिना रोक-टोक प्रसाद स्वीकार करने लगा।

गुरु उपेक्षा कैले, ऐछे फल हय ।
क्रमे ईश्वर-पर्य्यन्त अपराधे ठेकय ॥ ९९॥

गुरु उपेक्षा कैले—यदि किसी का गुरु उसे त्याग दे; **ऐछे**—ऐसा; **फल**—परिणाम; **हय**—होता है; **क्रमे**—धीरे-धीरे; **ईश्वर-पर्य्यन्त**—भगवान् तक; **अपराधे ठेकय**—अपराध करता है।

अनुवाद

यदि किसी का गुरु उसका तिरस्कार कर देता है, तो वह इतना पतित हो जाता है कि रामचन्द्र पुरी की तरह वह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के प्रति भी अपराध करता है।

यद्यपि गुरु-बुद्ध्ये प्रभु तार दोष ना लइल ।
तार फल-द्वारा लोके शिक्षा कराइल ॥ १००॥

यद्यपि—यद्यपि; **गुरु-बुद्ध्ये**—उसे गुरु मानकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **तार**—उसके; **दोष**—अपराध; **ना लइल**—नहीं माने; **तार**—उसके; **फल**—परिणाम; **द्वारा**—द्वारा; **लोके**—सामान्य लोगों को; **शिक्षा कराइल**—उन्होंने सिखाया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामचन्द्र पुरी के अपराधों पर विचार नहीं किया, क्योंकि वे उसे अपना गुरु मानते थे। किन्तु उसके चरित्र ने हर एक को गुरु का अपमान करने के परिणाम के विषय में शिक्षा दी।

চৈতন্য-চরিত্র——যেন অমৃতের পূর ।
শুনিতে শ্রবণে মনে লাগয়ে মধুর ॥ ১০১॥

চৈতন্য-চরিত্র——গ্রেন অমৃতের পূর ।
শুনিতে শ্রবণে মনে লাগয়ে মধুর ॥ १०१ ॥

চৈতন্য-চরিত্র—श्री चैतन्य महाप्रभु का चरित्र; **গ্রেন**—मानो; **অমৃতের পূর**—अमृत से परिपूर्ण; **শুনিতে**—सुनकर; **শ্রবণে**—कानों को; **মনে**—मन को; **লাগয়ে**—अनुभव होती है; **মধুর**—मधुरता।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु का चरित्र अमृत से पूर्ण है। उसके विषय में सुनना कान तथा मन को अच्छा लगता है।

চৈতন্য-চরিত্র লিখি, শুন এক-মনে ।
অনায়াসে পাবে প্রেম শ্রী-কৃষ্ণ-চরণে ॥ ১০২॥

চৈতন্য-চরিত্র লিখি, শুন এক-মনে ।
অনায়াসে পাবে প্রেম শ্রী-কৃষ্ণ-চরণে ॥ १०२ ॥

চৈতন্য-চরিত্র—श्री चैतन्य महाप्रभु का चरित्र; **লিখি**—मैं लिखता हूँ; **শুন**—कृपया सुनो; **এক-মনে**—सावधानीपूर्वक; **অনায়াসে**—आसानी से; **পাবে**—तुम प्राप्त करोगे; **প্রেম**—प्रेमभाव; **শ্রী-কৃষ্ণ-চরণে**—श्रीकृष्ण के चरणकमलों में।

अनुवाद

मैं श्री चैतन्य महाप्रभु के चरित्र के विषय में लिख रहा हूँ। हे पाठकों, कृपया ध्यान से इसे सुनो, क्योंकि इससे तुम श्रीकृष्ण के चरणकमलों में परमानन्दमय प्रेम सरलता से प्राप्त कर सकोगे।

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে যার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥ ১০৩॥

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে গ্রার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥ १०३ ॥

श्री-रूप—श्रील रूप गोस्वामी के; **रघुनाथ**—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी के; **पदे**—चरणकमलों में; **ग्रार**—जिनकी; **आश**—आशा; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत* नामक ग्रन्थ; **कहे**—वर्णन करते हैं; **कृष्णदास**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों की वन्दना करते हुए तथा सदैव उनकी कृपा की कामना करते हुए उनके चरणचिह्नों पर चलकर मैं कृष्णदास श्री चैतन्य चरितामृत का वर्णन कर रहा हूँ।

इस प्रकार श्रीचैतन्य-चरितामृत अन्त्य लीला के अन्तर्गत 'रामचन्द्र पुरी द्वारा महाप्रभु की आलोचना' शीर्षक आठवें अध्याय का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ।